Sita Ram's Our Ancient Theatre.

No. II—UTTARARAMACHARITA.

प्राचीननाटकमणिमाला

उत्तररामचरित भाषा

सीतारामकृत
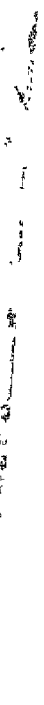
उत्तररामचरितभाषा

श्रीसीताजी के दूसरे वनवास की कथा

महाकवि श्रीभवभूति के प्रसिद्ध संस्कृत ग्रन्थ

का

भाषा गद्य और छन्दों में अनुवाद

श्रीअवधवासीभूपउपनाम

लाला सीताराम बी. ए.

का रचा हुआ

(*Sixth Edition*)

संवत् १९७८

बाबू मङ्गलराम के प्रबन्ध से राजपाली प्रेस
प्रयाग में छपा।

मिलने का पता—किशोर ब्रादर्स, २०३ मुट्ठीगंज
इलाहाबाद।

दाम ।≈)

नाटक के पात्र

ष—

श्रीरामचन्द्र—मर्यादापुरुषोत्तम और न

कुश } —नायक के जोड़िया लड़के।
लव }

लक्ष्मण—नायक के छोटे भाई।

चन्द्रकेतु—लक्ष्मण का लड़का।

जनक—मिथिला के राजा और नायिक

वाल्मीकि—एक मुनीश्वर।

शम्बूक—एक शूद्रतपस्वी।

भांडायन } वाल्मीकि के विद्यार्थी
सौधातकि }

सुमन्त—चन्द्रकेतु का सारथी।

गृष्टि—कञ्चुकी।

अष्टावक्र—एक मुनि।

दुर्मुख—नायक का भेदिया।

सीता—नाटक की नायिका।

अरुन्धती—वसिष्ठ मुनि की स्त्री।

कौशल्या—नायक की माता।

आत्रेयी—एक तपस्विनी।

तमसा } दो नदी देवियाँ।
मुरला }

वासन्ती—जनस्थान की वनदेवी।

[illegible] } दो प्रसिद्ध देवियाँ।
[illegible] }

[illegible]धर, विद्याधरी, सिपाही, प्रतीहार,

श्रीसीतारामाभ्यान्नमः

उत्तररामचरितभाषा ।

प्रस्तावना ।

(नान्दी)

बन्दि आदिकविपदकमल यह माँगैं बरदान ।
देवि भारती विधिकला सदा करैं कल्यान ॥

(नान्दी के पीछे सूत्रधार आता है)

सूत्र—बस, बस, बहुत बढ़ाने का कुछ काम नहीं है । आज ऐसे शुभ अवसर पर मैं सभासदों से निवेदन करता हूँ कि कश्यपगोत्र के एक महाकवि भवभूति नाम जातूकर्णी के पुत्र थे । उनके रचे हुए उत्तररामचरित नाटक को श्रीअवधवासी सीताराम ने भाषा में उतारा है, वही खेलने का विचार है । आशा है कि आप लोग श्रीरघुनाथजी का चरित जान इसको ध्यान से देखैंगे और अनुवाद कर्ता के परिश्रम को अपने अनुग्रह से सुफल करैंगे ।

(कुछ ठहर के) अच्छा तो मैं अब अयोध्यावासी और महाराज के समय का बना जाता हूँ । (चारों ओर देख के) अरे अरे आजकल तो रावण कुलघालक महाराजाधिराज श्रीरामचन्द्रजी की राजगद्दी के दिन हैं तो आंगन क्यों सूने देख पड़ते हैं ?

(नट आता है)

नट भाई, कारण यह है कि महाराज ने [illegible] के

ऋषियों और राजाओं को जो समाजन के लिये आये थे बिदा कर दिया। उन्हीं के लिये इतने दिन तक उत्सव रहा।

सूत्र—ठीक है, आज कल तो

अरुन्धती देवी सहित सँग वसिष्ठ मुनिराय।
गईं जमाईगेह को रामचन्द्र की माय॥

नट—मैं परदेसी हूँ मुझे बताइए यह दामाद कौन है।

सूत्र—निज पुत्री जो शान्ता नेहि दशरथ महराज।
लोमपाद नृप को दई गोद लेन के काज॥

उनका बिवाह विभाण्डक के पुत्र ऋष्यशृङ्ग के साथ हुआ। सो आजकल बारह बरस का यज्ञ कर रहे हैं। उसी कारण जानकी जी के गर्भ के दिन पूरे होने ही चाहते हैं तौ भी उन्हें छोड़कर लोग वहां चले गए। अब इस बात से हम को क्या हम तो नट हैं चलो राजद्वार पर चलकर अपना काम दिखावें।

नट—तो महाराज के लिये कोई अच्छी स्तुति सोचिये जिसमें किसी प्रकार का दोष न हो।

सूत्र—भाई,

दोषहीन जग मांहि नहिं सकै वस्तु कोउ होइ।
लखैं दोष, तिय, बानि, महँ, सदा दुष्ट नर लोइ॥

नट—सच है नगर के लोग बड़े दुष्ट हैं।

रानिहुं दोष लगावहीं नहिं कछु धर्म डेरात॥
अग्निशुद्धि सुनि नेकु नहि नगर लोग पतियात॥

सूत्र—भला जो कहीं यह महाराज के कान में पड़े तो बड़ी बुरी बात हो।

नट—देवता सदा मङ्गल करेंगे।

सूत्र—(इधर उधर चल के) अरे इस समय महाराज कहां हैं? हां जाना,

आए अवध समाजन काजा। सो घर गए जनकपुरराजा॥

दुखित रानि समुझावन हेतू। मन्दिर चले भानुकुलकेतू॥

(दोनों बाहर जाते हैं)

पहिला अङ्क।

[पहिला स्थान—अयोध्या राजमन्दिर, कनक भवन]

(श्रीरामचन्द्र सीता समेत आसन पर बैठे हैं)

राम—रानी, इतना सोच न करो। यह नहीं हो सकता कि तुम्हारे पिता हम लोगों को छोड़ दें। पर क्या करें,

फंसे रहत जो नित करत यज्ञ होम के कर्म।
रोकत सकल स्वतंत्रता अग्निहोत्रगृहधर्म॥

सीता—आर्यपुत्र, मैं जानती हूँ पर माता पिता के बिछुड़ने से दुख होता ही है।

राम—इसमें क्या सन्देह है। यही संसार के भाव हैं जिन से घबड़ा कर सब कामों को छोड़ कर विद्वान् लोग जङ्गल में जाकर रहते हैं।

(कञ्चुकी आता है)

कञ्चुकी—भैया रामचन्द्र (इतना कह के दांतों के तले जीभ दबा कर) श्री महाराज!

राम—(मुसकरा के) भाई हमारे पिता जी के नौकरों के मुंह से हमें भैया रामचन्द्र ही अच्छा लगता है तो जैसा तुम्हें अभ्यास है वैसा ही कहा करो।

कञ्चुकी—ऋष्यशृङ्गजी के आश्रम से अष्टावक्रजी आये हैं।

सीता—तो क्यों रोके हो?

राम—जल्दी भेजो।

(कञ्चुकी बाहर जाता है, अष्टावक्र आता है)

अष्टावक्र—स्वस्ति हो।

रामचन्द्र—प्रणाम, आइये।

सीता—प्रणाम, हमारी सास और शान्ता बीबी कुशल से हैं?

रामचन्द्र—हमारे बहनोई ऋष्यशृङ्ग और शान्ता बहिन अच्छी हैं ?

सीता—हम लोगों की कभी सुध करते हैं ?

अष्टावक्र—(बैठ के) क्यों नहीं । महारानी आपसे वसिष्ठ जी ने यह कहला भेजा है ।

सब जग पालि जियावत जोई । जायो तुमहिं देवि महि सोई ॥
भूप प्रजापति सरिस उदारा । सीरध्वज नृप पिता तुम्हारा ॥
भई वहू तिनके घर माहीं । जहँ हम अरु दिनपति गुरु आहीं ॥

तो और तुम्हें क्या आसीस दें तुम्हारे वीर पुत्र हों ।

राम—हम लोगों पर बड़ी कृपा हुई ।

लौकिक सज्जन नित कहैं वचन अर्थ अनुहार ।
आदि ऋषिन के बचन संग धावत अर्थ उदार ॥

अष्टावक्र—भगवती अरुन्धती और देवियों और शान्ताजी ने बार बार कहा है कि जो आज कल सीताजी का जी किसी वस्तु पर चले तो उसको तुरन्त उपस्थित करना ।

राम—यह जो कहती हैं सो किया ही जाता है ।

अष्टावक्र—और महारानी के नन्दोई ऋष्यशृङ्गजी ने कहा है कि यह तुम्हारे दिन पूरे होने को हैं इससे तुमको यहां नहीं बुलाया और तुम्हीं को बहलाने के लिये रामचन्द्र भी वहीं हैं तो अब हम तुम्हें लड़के से गोद भरी देखेंगे ।

रामचन्द्र—(हर्ष और लाज से मुसकरा के) अच्छा हम को वसिष्ठ जी ने कुछ आज्ञा नहीं दी ?

अष्टावक्र—जी हां सुनिये ।

हम जमाद के मख फंसे तुम बालक नव राज ।
राखिय सदा प्रसन्न निज कर्मन प्रजासमाज ॥
रघुवंशी महिपाल कहं यहि सम जो जस होय ।
आनिय निज सम्पति परम मन बच तन तुम सोय ॥

राम—गुरू जी ने बहुत ठीक कहा है।

नेह दया औ देह सुख के मिथिलेशकुमारि।
त्यागत मोहि कछु दुख नहीं पुरजन प्रीति विचारि।

सीता—ऐसी ही बातों से आर्यपुत्र रघुकुल के धुरंधर हैं।

राम—कौन आता है? अष्टावक्र जी बैठिये।

अष्टावक्र—(उठ कर घूम के) कुमार लक्ष्मण जी आगये।

(अष्टावक्र बाहर जाता है, लक्ष्मण जी आते हैं)

लक्ष्मण—दादा की जय हो। दादा, चितेरे ने हम लोगों के कहने से भीतियों पर आप का चरित उतारा है उसे आप देख लीजिये।

राम—भैया आज रानी का चित्त कुछ उदास है सो तुमने उनके जी बहलाने का अच्छा उपाय किया। सो कब तक के चरित लिखे हैं।

लक्ष्मण—भाभी की आगि में शुद्धि तक।

राम—ऐसी बात न कहो।

सहज पवित्र शरीर, पावन कर नहि काज तेहि।
पावक, तीरथ नीर, शुद्ध और से होत नहि॥

रानी यज्ञभूमि की बेटी तुम बुरा न मानना यह तो तुम्हारे ऊपर जनम का कलङ्क लग चुका।

कुलजस राखत भूप लखि मानत कूप पुर लोग।
यहि हित जो कछु मैं कहा रहा न सो तव जोग॥
देत सुगन्ध सुभाव सन नित जो कुसुम सुहाय।
ताहि धारिये सीस पर नाहिं धारिये पाय॥

सीता—जाने दीजिये आर्यपुत्र, आइए हम लोग आप का चरित देखैं। (सब उठकर बाहर जाते हैं)

[दूसरास्थान—राजमन्दिर, चित्रशाला]

(सीता, राम, और लक्ष्मण आते हैं)

रामचन्द्र—हमारे बहनोई ऋष्यशृङ्ग और शान्ता बहिन अच्छी हैं?

सीता—हम लोगों की कभी सुध करते हैं?

अष्टावक्र—(बैठ के) क्यों नहीं। महारानी आपसे वसिष्ठ जी ने यह कहला भेजा है।

सब जग पालि जियावत जोई। जायो तुमहिं देवि महि सोई॥
भूप प्रजापति सरिस उदारा। सीरध्वज नृप पिता तुम्हारा॥
भई बहू तिनके घर माहीं। जहं हम अरु दिनपति गुरु आहीं॥

तो और तुम्हें क्या आसीस दें तुम्हारे वीर पुत्र हों।

राम—हम लोगों पर बड़ी कृपा हुई।

लौकिक सज्जन नित कहैं बचन अर्थ अनुहार।
आदि ऋषिन के बचन संग धावत अर्थ उदार॥

अष्टावक्र—भगवती अरुन्धती और देवियों और शान्ताजी ने बार बार कहा है कि जो आज कल सीताजी का जी किसी वस्तु पर चले तो उसको तुरन्त उपस्थित करना।

राम—यह जो कहती हैं सो किया ही जाता है।

अष्टावक्र—और महारानी के नन्दोई ऋष्यशृङ्गजी ने कहा है कि वह तुम्हारे दिन पूरे होने को हैं इससे तुमको यहां नहीं बुलाया और तुम्हीं को बहलाने के लिये रामचन्द्र भी वहीं हैं तो अब हम तुम्हें लड़के से गोद भरी देखेंगे।

रामचन्द्र—(हर्ष और लाज से मुसकरा के) अच्छा हम को वसिष्ठ जी ने कुछ आज्ञा नहीं दी?

अष्टावक्र—जी हां सुनिये।

हम जमाद के मख फंसे तुम बालक नव राज।
राखिय सदा प्रसन्न निज कर्मन प्रजासमाज॥
रघुवंशी महिपाल कहं, यहि सन जो जस होय।
जानिय निज सम्पति परम, मन बच तन तुम सोय॥

राम—गुरु जी ने बहुत ठीक कहा है ।

नेह दया औ देह सुख कै मिथिलेशकुमारि ।

त्यागत मोहि कछु दुख नहीं पुरजन प्रीति विचारि ।

सीता—ऐसी ही बातों से आर्यपुत्र रघुकुल के धुरंधर हैं ।

राम—कौन आता है ? अष्टावक्र जो बैठिये ।

अष्टावक्र—(उठ कर घूम के) कुमार लक्ष्मण जी आगये ।

(अष्टावक्र बाहर जाता है, लक्ष्मण जी आते हैं)

लक्ष्मण—दादा की जय हो । दादा, चितेरे ने हम लोगों के कहने से भीतियों पर आप का चरित उतारा है उसे आप देख लीजिये ।

राम—भैया आज रानी का चित्त कुछ उदास है सो तुमने उनके जी बहलाने का अच्छा उपाय किया । तो कब तक के चरित लिखे हैं ।

लक्ष्मण—भाभी की आगि में शुद्धि तक ।

राम—ऐसी बात न कहो ।

सहज पवित्र शरीर, पावन कर नहि काज तेहि ।

पावक, तीरथ नीर, शुद्ध और से होत नहि ॥

रानी यज्ञभूमि की बेटी तुम बुरा न मानना यह तो तुम्हारे ऊपर जनम का कलङ्क लग चुका ।

कुलजस राखत भूप लखि मानत नृप पुर लोय ।

यहि हित जो कछु मैं कहा रहा न सो तव जोग ॥

देत सुगन्ध सुभाव सन नित जो कुसुम सुहाय ।

ताहि धारिये सीस पर नांहि पारिये पाय ॥

सीता—जाने दीजिये आर्यपुत्र, आइए हम लोग आप का चरित देखें । (सब उठकर बाहर जाते हैं)

[दूसरास्थान—राजमन्दिर, चित्रशाला]

(सीता, राम, और लक्ष्मण आते हैं)

लक्ष्मण—यही तो हैं चित्र ।

सीता—(देख के) अरे यह कौन हैं जो ऊपर खड़े हुए आर्यपुत्र का गुन गा रहे हैं ?

लक्ष्मण—ये गुरुमंत्र सहित जृम्भक हथियार हैं जिन्हें विश्व के मित्र विश्वामित्र ने अपने गुरु कृशाश्व से पाया था और उन्होंने दादा को ताड़का के मारने को दिया ।

राम—रानी, विद्याओं के हाथ जोड़ो ।

कीन्हो तप सत बरिस लौं ब्रह्मादिक इन हेत ।
तब देखे ए अस्त्र जनु निज तप तेज समेत ॥

सीता—इनको हाथ जोड़ती हूँ ।

राम—ये अब तुम्हारी संतान को मिलेंगे ।

सीता—मुझ पर बड़ी कृपा हुई ।

लक्ष्मण—यह मिथिला का हाल है ।

सीता—अरे यह तो जुल्फी धरे आर्यपुत्र बने हुए हैं इन की देह की सुन्दरताई खिलते हुए नील कमल की नाईं कैसी सुन्दर झलक रही है और चाचा अचरज मान कर एक टक आप का रूप देख रहे हैं । यह देखो इन्होंने सहज ही महादेव जी का धनुष तोड़ डाला ।

लक्ष्मण—भाभी देखो,

शतानन्द कुलगुरु सहित यह पूजैं तव तात ।
गुरु वसिष्ठ आदिक सकल जिन सन जोरो नात ॥

राम—यह तो देखने ही के जोग हैं ।

रघुवंशी अरु जनक कर नात सुहाय न काहि ।
लेत देन दोउ ओर से कौशिक मुनि जेहि मांहि ॥

सीता—यह देखिये यह चारों भाई ब्रह्मचर्य की समाप्ति पर मुंडन होने पर बिवाह का कङ्कन पहिने खड़े हैं । इनको

देखने से मुझे ऐसा सुख मिलता है मानो वही समय फिर आगया और हम लोग फिर वहीं बैठे हैं।

राम—ठीक है,

समुझि परत मोहि सो समय जेहि अवसर सुकुमारि।
शतानन्द कर को दयो अपने कर में धारि॥
मञ्जुल कङ्कनयुत मनहुं कोउ उत्सव सुखकन्द।
तव सुन्दर कर मैं लह्यो, शशिमुखि, परम अनन्द॥

लक्ष्मण—यह देखिये भाभी हैं, यह भाभी मांडवी हैं, और यह बहू श्रुतिकीर्ति हैं।

सीता—और भैया यह चौथी कौन है इसे काहे छोड़े जाते हो?

लक्ष्मण—(लाज से मुसकरा के अलग) अरे भाभी उर्मिला को पूछती हैं? अच्छा अब इन्हें अलग दिखाऊं(प्रकाश) भाभी, देखो यह परशुराम जी हैं।

सीता—(घबड़ा के) अरे मुझे बड़ा डर लगता है।

लक्ष्मण—भाभी जी, यह देखो दादाने (इतना कहते ही)

राम—(आलप से) अरे अभी बहुत देखना है और देखो।

सीता—(स्नेह और आदर से देख के) आर्यपुत्र का विनय कैसा अच्छा लगता है अपनी बड़ाई आप नहीं देखा चाहते।

लक्ष्मण—यह देखो हम लोग अयोध्या पहुंच गये।

राम—(आंखों में आंसू भर के)मुझे याद है।

रहे जियत तब तात, भा सब कर नव ब्याह जब।
रहत स्वस्थ सब मात, कहां गये अब सो दिवस॥

और तब यह जानकी,

कछु छिटकी कछु मिली लटैं निज मुख पर डारत।
दशन कली से, भोली सी अति बाल निहारत॥
बने जोन्ह से अङ्ग सहज ही करत विलासा।
भई मातन के हेत मनोहर मनहुं तमासा॥

लक्ष्मण—यह मन्थरा है।

राम—(बिना उत्तर दिये अलग दिखाकर) रानी,

श्रृङ्गवेरपुर में सोई इंगुदि रूख सुहाय।

जहं निषादपति गुह मिल्यो बड़ो प्रोति सन आय॥

लक्ष्मण—(हंस के आपही आप) अरे मझली मा का करतब सब छोड़ दिया।

सीता—अरे यह देखो जटा बांधी जा रही है।

लक्ष्मण—सौंपि नुतन कहं राज जो वृद्ध भानुकुल भूप।

कियो सो त्योंहीं बालपन प्रभु व्रत पुण्य अनूप॥

सीता—यह देखिये निर्मल जल से गंगा जी बह रही हैं।

राम—श्रीरघुकुल की देवता, तुमको नमस्कार है।

सगरयज्ञ महं खोदत महि हय ढूंढ़न लागे।

कपिलशाप से भस्म भए पुरखे जो आगे॥

गनि न भगीरथ देह दुःख तप कीन्ह अपारा।

तेरे जल सों परसि कीन्ह सब कर उद्धारा॥

सो, हे माता, तुम अपनी बहू जानकी पर सदा कृपादृष्टि रखना।

लक्ष्मण—यह वह श्याम नाम बरगद का पेड़ है जो भरद्वाज के कहने से चित्रकूट जाते हुए राह में मिला था।

राम—(बड़े चाव से देखता है)

सीता—(अलग राम से) आर्यपुत्र आप को कुछ इस जगह की सुध है?

राम—(अलग सीता से) अरे कैसे भूल सकते हैं?

थकी चलत मारग मुरझाये। बार बार तव अङ्ग दबाये।

दुबर जनु मीजे जलजाता। सोई धरि मो उर निज गाता॥

लक्ष्मण—यह विन्ध्याचल के जङ्गल के किनारे विराध के साथ लड़ाई हो रही है।

सीता—रहने दीजिये। यह देखिये आर्यपुत्र ताड़ के पत्तों का छाता लगाये हम लोगों के साथ दक्खिन के देश जा रहे हैं।

राम—झिरनन के तट पर लगे यहि तपभूमि सुहाय।
वैखानस जहं तप करैं आश्रम नकन बनाय॥
रहत शान्तचित करत नित अतिथिन कर सत्कार।
परे गृहस्थी में तऊँ नित पकाय नीवार॥

लक्ष्मण—जनस्थान के बीच यह प्रस्रवण नाम पहाड़ है जिसका नीलारंग बादलों के बढ़ने से और भी मैला हो गया है और जिस की खोहों के चारों ओर घने पेड़ों के अन्धेरे बन में गोदावरी के बहने से कैसा शोर होता है।

राम—सुमिरहु यह पर्वत सुकुमारी। लछिमन सेवा करत [illegible]मारी॥
वह गोदावरि निर्मलनीरा। वह विहार ताके शुचि तीरा॥

लक्ष्मण—यह पंचवटी में शूर्पनखा है।

सीता—हाय आर्यपुत्र, इसके आगे तुम्हारे दरसन न होंगे।

राम—अरी वियोग को क्यों इतना डरती हो यह तो चित्र है।

सीता—अच्छा जो कुछ हो बुरे लोगों से दुख होता ही है।

राम—अरे जनस्थान की बात तो ऐसी जान पड़ती है मानो अभी हो रही है।

लक्ष्मण—बनि कपटमृग छलि हम सबन पापीनिशाचर जो कियो।
सो यतन करि मेट्यो तऊं सुधि होत नित बेधत हियो॥
सुनसान दण्डक मांहि तेहि छन कीन्ह आप बिलाप जो।
तब फट्यो वज्रहु को हियो सुनि रोए जड़ पाषान सो॥

सीता—(आंखों में आंसू भर के) महाराज रघुकुल को तो तुम सुख देते हो और मेरे लिये इतने दुखी हो।

लक्ष्मण—(रामचन्द्र को देख कर) दादा यह क्या है?
तव दृगजल जनु मोतिन माला। फैलत टूटि धरनि तेहि काला॥
मन दृढ़ करि यद्यपि प्रभु रोका। तेहि छन प्रबल कोप अरुसोका॥

फरकत नाक ओंठ यह जानो। औरहु सकै दुःख अनुमानी॥

रास—भैया।

तेहि छन सियवियोग दुखदाई। सह्यो करत प्रतिकार उपाई॥
दुःखआगि अब फिरसो जागत। हियमहं घावकरत सीलागत॥

सीता—हाय हाय मेरी भी विपत्ति ऐसी बढ़ी है कि मैं अपने को बिना आर्यपुत्र के देखती हूँ।

लक्ष्मण—(आपही आप) अच्छा तो इन्हें और कहीं दिखावैं (चित्र को देख प्रकाश) यह देखिये मन्वन्तर के बूढ़े गृध्रराज की बहादुरी दिखाई गई है।

सीता—हा बाबा, तुमने लड़कों के साथ बड़ी प्रीति निबाही।

राम—हा, बाबा गिद्धराज, तुम्हारे ऐसे साधु फिर कहां मिलैंगे?

लक्ष्मण—यह चित्र देखिये यह कुंजवान नाम दण्डक बन का खण्ड है जिसमें दनु और कबन्ध रहते थे। यह ऋष्यमूक पर्वत पर मतंग मुनिका आश्रम है यह श्रमणा नाम सिद्धि सबरी हैं और यह पम्पा ताल है।

सीता—अरे इहां तो आर्यपुत्र मारे क्रोध और शोक के गला फाड़ के रोये थे।

राम—रानी, यह ताल बड़ा सुहावना है।

यहां हंस निज पंख डुलावत। पुण्डरीक के दंड हिलावत॥
जब जब रुकी आंसु की धारा। तबतब बिकसित भाग निहारा॥

लक्ष्मण—यह हनूमान जी हैं।

सीता—वाह हनूमान जी तुम बड़भागी हो तुम्हीं ने बहुत दिन से सोक में डूबे हुए लोगों को उबार के उपकार किया था।

राम—अतुल बीरता बुधि धरे सोई पवनकुमार।
भए कृतारथ जासु बल हम सब औ संसार।

सीता—भैया, इस पहाड़ का क्या नाम है जिसके ऊपर

कदम्ब के पेड़ों पर मोर बैठे नाच रहे हैं जिस में पेड़ के तले रोते हुए आर्यपुत्र जो अपनी सुन्दरताई ही से पहिचाने जाते हैं बेसुध होकर गिरे थे और तुमने रोते हुये संभाल लिया था।

लक्ष्मण—माल्यवान यह शैल जहां महँकत अर्जुन बन।
लसत सिखा पर आसु नील रंग सुन्दर नवघन॥

राम—छोड़ छोड़ु यहि तात सकौं अब सहि मैं नाहीं॥
सियवियोग की बात मनहु फिर होत लखाहीं॥

लक्ष्मण—इसके आगे दादा के वह अद्‌भुत काम हैं जो राक्षसों और बन्दरों के साथ किये गये थे। पर मुझे जान पड़ता है कि भाभी थक गई हैं, आराम कर लीजिये।

सीता—आर्यपुत्र, चित्र देखने से मेरा मन एक बात को चाहता है कहिये तो कहूं।

राम—ज़रूर कहो।

सीता—हो सके तौ फिर उन घने और अच्छे बनों में फिरैं और गोदावरी के ठंढे और पवित्र पानी में नहायं।

राम—भैया लक्ष्मण।

लक्ष्मण—जो आज्ञा।

राम—देखो अभी बड़ों की आज्ञा मिली है कि जिस बात पर जी चले उसे तुरंत करना सो तुम जाके ऐसा रथ सजवाओ जो हलका जाय और झोंका न लगे।

सीता—आर्यपुत्र तो तुम को भी चलना होगा।

राम—अरी कैसी कठोर है यह भी कहने की बात है?

सीता—बस मैं यही चाहती हूं।

लक्ष्मण—जो दादा की आज्ञा। (बाहर जाता है)

राम—प्रिये आओ इस खिड़की के पास थोड़ी देर बैठें।

सीता—पर हम तौ थक गये हैं हमें नींद आ रही है।

राम—आओ फिर मेरे पास आके सोओ ।

परत इन्दुकर चन्द्रमणि हार सरिस दोउ चारु।

लखन खेदकन बाहु निज मेरे गर महं डारु॥

(पास बैठा के आनन्द से) प्रिया यह क्या है ?

समुझि परै कछु नाहिं, दुख कै सुख कै नींद यह ।

फैलत है तन माहिं, बिष सम मद सम मोह सम ॥

परसत ही तव अँग, सिथिल होत इन्द्रिय सकल ।

होत सबहुं मतिभंग, भूलत सब सुधि देह की ।

सीता—(मुसकरा के) तुम्हारी दया है और क्या है हम तो कुछ नहीं हैं ।

राम—गुरझाने हिय फूल खिलावत । मद्सम अङ्गअङ्गपरछावत॥
करत मृन सुन्दरि को बानी । अमिय रसायन महँ जनु सानी॥

सीता—प्यारे अब हम सोवेंगे (सोने के लिये इधर उधर देखती है)

राम—क्या ढूँढती हो ?

ब्याहघरी ते बालपन, जोबन, घर बन माँह ।

रही उसीसे तेरेही सदा राम की बांह ॥

सीता—(आंखें बन्द किये नींद में) जी हां ।

राम—क्या प्रिया सो गई । (स्नेह से देख के)

घर की लछिमी नैनन को जनु अमिय सलाई ।

परसत यह तन ठंड करत चन्दन की नाई ॥

परी कंठ में बांह लगे जनु मोतीय माला ।

यहि कह का पियार, दुसह बिछुड़न की ज्वाला ।

(प्रतिहारी आती है)

प्रतिहारी—महाराज आ गया ।

राम—अरी कौन ?

प्रतिहारी—महाराज का भेदिया दुर्मुख जो सदा महाराज के साथ रहता है ।

राम-(आपही आप) दुर्मुख तो रनिवास का नौकर है उसे हमने नगर के लोगों का भेद लेने भेजा था। (प्रकाश) आवै।

(दुर्मुख आता है)

दुर्मुख—(आप ही आप) हाय मैं कब जानता था कि सीता महारानी की ऐसी बात सुनूंगा। हाय मैं महाराज से इसे कैसे कहूँ। क्या करूं मुझ अभागी का काम यही है।

सीता-(सपने में बोलती है) हाय आर्यपुत्र कहां हो ?

राम—अरे चित्र देखने से रानी को वियोग की सुधि सोने नहीं देती। (सनेह से अङ्ग छूकर)

साथ दिये सुख में दुख में जा रहै सब बात में एकहि ढँगा।
चित्त लहै बिसराम जहां रस सूढ़ भए बदलै नहिं रंगा।
छूटत लाज सकोच सबै जो बढ़ावत है नित प्रेम अभंगा।
एकहु ऐसे सुमानुस को जगमाहि मिलै बड़ो भाग से संगा।

दुर्मुख—(आगे बढ़ के) श्री महाराज की जय हो।

राम—कहो क्या सुना ?

दुर्मुख-सारे नगर में लोग महाराज की बड़ाई कर रहे हैं और कहते हैं कि हम लोग इनके राज में महाराज दशरथ को भूल गए।

राम-यह तो प्रशंसा हुई। दोष कहो तो उसका उपाय किया जाय।

दुर्मुख-(आंसू भर के) सुनिये श्रीमहाराज (कान में कहता है)

राम—हाय ! कैसी वज्र ऐसी बात कही। (बेसुध हो कर गिर पड़ता है)

दुर्मुख-श्रीमहाराज, होश में आओ।

राम—(होश में आके) हाय !

सिय कर परस रहन चवाऊ। यदपि किये बहु मिटन उपाऊ॥
कौसल फिरि पुरजन महं कैसे। दवो देह कुक्कुरविष जैसे॥

हाय ! तो अब मैं क्या करूं (सोच के करुणा से) और क्या कर सकते हैं।

राखत लोग प्रसन्न नित सज्जन करि सब काम।
पठै आसु हित पुत्र वन तात गये सुर धाम॥

और अभी वसिष्ठ जी ने भी कहला भेजा है।

जग प्रसिद्ध रविकुल के भूपा। राख्यो जो जस विमल अनूपा॥
तहां मैल मो सन अब लागा। अधम कौन मो सरिस अभागा॥

हाय ! देवी यज्ञभूमि की बेटी ! हाय तुम्हारे जनम से तो पृथिवी पवित्र हुई। हाय जनकों के वंश को आनन्द देनेवाली तुम्हारे शील की बड़ाई तो पावक वसिष्ठ जी अरुन्धती ने की थी। हाय ! तू तो राम को अपना प्राण समझती है। हाय ! बनवास की प्यारा संगिनि ! हाय तेरी बोली कैसी प्यारी लगती है! हाय ! तू क्या थी और तेरा कैसा परिणाम होगया।

जगपावन तोहि सन, कहैं तोहि अपावन बात।
सब लोगन की नाथ तू, तू अनाथ अब जात॥

(दुर्मुख से) दुर्मुख, लक्ष्मणजी से जाके कहो कि तुम्हारे नये राजा रामचन्द्र यह तुमको आज्ञा देते हैं। (कान में कहता है)

दुर्मुख—यह आपने क्या पाजियों के कहने से ठान लिया। महारानी की तो आग में शुद्धि हो गई है। आजकल तो उनके पेट में रघुकुल की शुद्ध संतान है।

राम—अरे चुप, नगर की प्रजा कैसे पाजी हो सक्ती है।

प्रजहिंपियार भानुकुल रहेऊ। यह कलंक सोविधि वस लहेऊ॥
दूर जो भई शुद्ध की रीती। काहि तासु इहँ होइ प्रतीती॥

दुर्मुख—हा महारानी ! (बाहर जाता है)

राम—हाय हाय, मैं भी कैसा कठोर हो गया। हाय मेरी इस चाल को लोग बुरा कहेंगे।

बालपने सन पाया प्यारा। जानी कबहुं न हिय सों न्यारा॥

मैना सम तेहि बिन अपराधा। सौंपत मृत्यु हाथ जिमि ब्याधा ॥

हाय. मैं पापी अब रानी को क्यों छुऊं (सीता का सिर उठा के अपना हाथ खींच के)

ए भोरी मोहि छाँड़ि दे मैं पापी चंडार ।
चन्दन के धोखे लसी तू बिषतरु की डार ॥

(उठकर) हाय ! संसार उलट गया, हाय ! आज मेरे जीने का कुछ काम न रहा, हाय ! संसार सूना उजाड़ जंगल सा हो गया । मैं तो समझता हूँ कि

मिली चेतना राम को दुख भोगन के काज ।
वज्रकील सन जनु जड़े निसरत प्रान न आज ॥

हाय ! माता अरुन्धती ! हाय ! महात्मा वसिष्ठ ! विश्वामित्र ! हाय ! अग्नि देवता ! हाय ! धरती देवी ! हाय ! जनक जी ! हाय पिता ! हाय माता ! हाय प्यारे मित्र महाराज सुग्रीव ! हाय हनुमान जी ! हाय ! परम उपकार करने वाले लङ्का के राजा बिभीषण ! हाय ! सखी त्रिजटा ! आज राम पापी ने तुम सब का अनादर किया आज सब को रामने धोखा दिया । हाय ! मैं उनका अब कैसे नाम लूं,

ते सज्जन गुनधाम, उन कहं लगि है दोष जो ।
तिन सब के सुभ नाम, मैं कृतघ्न पापी लिए ॥

हा बेचारी इन्हें इस का कभी ध्यान भी न होगा ।
सोई बांह सीस निज धारी । सोभा निज वर की प्रिय नारी ।
बाढ़ो गर्भ होत दिन पूरा । देहुं पशुन तेहि बलि मैं क्रूरा ॥
(रोता है) (परदे के पीछे) धर्म का नास हो रहा है ।

राम—(चौंक कर) देखो तो क्या है ।

(फिर परदे के पीछे)

करत कठिन तप जो रहे मुनि यमुना के तीर ।
आये डर से लवन के शरण तेरी, रघुबीर ॥

राम (चौंक कर) अरे अब भी राक्षसों का डर है। अच्छा तो इस पापी कुम्भीनसी के लड़के को जड़ से उखाड़ने को शत्रुघ्न को भेजूं। (कुछ चलकर ठहर के) हाय रानी तुम कैसे अकेली रहोगी? धरती माता तुम अपनी बेटी जानकी को देखे रहना' तुम को सौंपता हूं।

ऊाई शीलसनेहयुत देवयज्ञ तुम जोय।
जोरयो मङ्गल गांठि है जिन रघुनिमिकुल दोय॥

(बाहर जाता है)

सीता—(जग कर) हाय प्यारे आर्यपुत्र कहां हो? (जल्दी से उठ के) हाय, हाय, मैं बुरा सपना देख के दुख पाके आर्यपुत्र को पुकार रही हूँ। हाय मुझे अकेली सोई छोड़ आर्यपुत्र चले गए। अच्छा जो उनको देखने पर मेरा मन मेरे वस में रहेगा तो रिस करूंगी। कोई है बाहर?

(दुर्मुख आता है)

दुर्मुख—श्रीमहारानी कुमार लक्ष्मण जी ने हाथ जोड़ के कहला भेजा है कि रथ तैय्यार है आइए सवार हो जाइए।

सीता—बहुत अच्छा (उठकर चलकर) मेरा पेट डोलता है तो धीरे धीरे चलूं।

दुर्मुख—इधर इधर श्री महारानी।

सीता—तपस्वियों को प्रणाम, रघुकुल के देवताओं को प्रणाम, आर्यपुत्र के चरणों को प्रणाम, सब सासुओं को प्रणाम

(दोनों बाहर जाते हैं)

दूसरे अङ्क का विष्कम्भक।

[स्थान—जनस्थान वन]

(परदे के पीछे)

तपस्विनी जी स्वागत,

(एक तपस्विनी बटोही बनी हुई आती है)

तपस्विनी—अरे यह तो वनदेवता हैं, फल फूल की भेंट मुझे देने आई हैं।

(वनदेवी आती है)

वनदेवी—(अर्घ्य रख कर)

धनि धनि मेरे भाग जानिए धन आपन सब।
बड़े पुण्य से मिलत भलन को सन्त समागम॥
तरु की छाया नीर, जोग तप के जो होईं।
कन्दमूल सब वस्तु जानिए आपनि सोई॥

तपस्विनी—इस में क्या कहना है।

हरत लोक कर चित्त विनय सन बोलत बानी।
उचितवचन नित कहत धरे मति अति कल्यानी॥
आगे पीछे एक सरिस प्रगटावत प्रीती।
सोहत जग महं नित्य शुद्ध साधुन की रीती॥

(दोनों बैठ जाती हैं)

वनदेवी—आप कौन हैं ?

तपस्विनी—मेरा नाम आत्रेयी है।

वनदेवी—आत्रेयीजी आप कहाँ से आती हैं और आपने दंडकवन को किस प्रयोजन से शोभा दी है ?

आत्रेयी—यहि वनमहंअगस्त्यमुनिआदी। रहैं अनेक ब्रह्मश्रुतिवादी॥
तिन सन सिखन वेदसमुदाई। बालमीकि ढिग सन इहं आई॥

वनदेवी—बड़े अचरज की बात है, बालमीकिजी तो वेद सब से अधिक जानते हैं, अन्त तक पढ़े हैं, उनके पास और ऋषि लोग वेद पढ़ने आते हैं, तो आप ने घर छोड़ इतना दुख क्यों सहा ?

आत्रेयी—वहां पढ़ने में बड़ा विघ्न है इससे प्रवास अंगीकार किया।

वनदेवी—कैसा ?

आत्रेयी—वहां किसी देवी ने दूध बढ़ाने के पीछे सब प्रकार से अद्भुत थोड़ी वय के दो लड़के वाल्मीकिजी को सौंपे। उनको देख ऋषियों ही का नहीं वरन चर और अचर सब का चित्त मोह जाता है।

वनदेवी—उनका नाम आप जानती हैं ?

आत्रेयी—उस देवता ने उनका नाम कुश और लव बताया था और उनका प्रभाव भी जना दिया था।

वनदेवी—कैसा प्रभाव ?

आत्रेयी—उन दोनों को जन्म ही से गुप्त मन्त्र सहित जृम्भक अस्त्र सिद्ध हैं।

आत्रेयी—वाल्मीकिजी ने उन दोनों का धाय का काम अङ्गीकार करके, पाला और मुण्डन करके सावधान हो तीनों वेद छोड़ सब विद्या पढ़ा दी। अब गर्भ के ग्यारहवें बरस लगते क्षत्रियों की रीति से उनका जनेऊ कर उनको वेद पढ़ाना आरम्भ किया है। उनकी बुद्धि बहुत तीव्र है। उनके साथ हमारा पढ़ना नहीं हो सकता। क्योंकि,

> विद्या सब जड़ चतुर को गुरु एक संग देत।
> काहू को कै काहु सों समुझ देत नहिं लेत॥
> तऊ दुहुन के बोध में अन्तर लखो घनेर।
> सो छाया जो मनि परै नहिं माटी के ढेर॥

वनदेवी—यही विघ्न है ?

आत्रेयी—और भी है।

वनदेवी—और क्या है ?

आत्रेयी—एक दिन वाल्मीकिजी दोपहर दिन चढ़े तमसा पर गए, वहां देखा कि एक जोड़ा सारस का चर रहा है,

उसमें से एक को एक बहेलिये ने मार डाला। सो अकस्मात् उनके मुंह से सरस्वती दोषरहित अनुष्टुप छन्द में निकल पड़ी।

मा निषाद प्रतिष्ठान्त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

बनदेवी–अरे यह वेदों से भिन्न नये छंदों का अवतार हुआ!

आत्रेयी–उसी समय ऋषिजी के सामने पद्मयोनि ब्रह्मा जी ने प्रगट होकर कहा, "हे ऋषि तुम्हारी बानी में आंख खुल गई है सो तुम रामचन्द्र का चरित बनाओ। तुम्हारे ज्ञान की दृष्टि कभी धोखा न खायगी। तुम आदिकवि हो।" ऐसा कहकर अन्तरध्यान हो गये। इसपर वाल्मीकिजी ने संसार में पहिले ही पहिल रामायन रच डाली।

बनदेवी—तब तो संसार पंडित हो गया।

आत्रेयी–इसी से मैंने कहा बड़ा विघ्न है।

बनदेवी–ठीक है।

आत्रेयी–मैं थक गई हूं मुझे अगस्त्य के आश्रम की राह बता दो।

बनदेवी–ऐसे ही पंचवटी होके गोदावरी के तीरे तीरे चली जाइए।

आत्रेयी–(आंखों में आंसू भर के) अरे यही तपोवन है, यही पंचवटी है यही गोदावरी नदी है, यही प्रस्रवण पहाड़ और तुमही जनस्थान की देवी वासन्ती हो।

वासन्ती–हां सब तो है।

आत्रेयी–जानकी बेटी,

संगी यह सब तोर लखाहीं। कथा प्रसङ्ग कहे अब जाहीं॥
नाम मात्र तू जग तजँ तोहीं। सब जनु प्रगट देखावत मोहीं॥

वासन्ती—(डर से आपही आप) नाममात्र क्यों कहा

(प्रकाश) कहिये सीताजी को क्या हुआ क्या विपत पड़ी ?

आत्रेयी—विपत ही नहीं पड़ी कलङ्क भी लगा (कान में कहती है)

वासन्ती—हाय हाय दैव ने बड़ी कठोरता की।

(बेसुध होकर गिर पड़ती है)

आत्रेयी—वनदेवी, धीरज धरो उठो।

वासन्ती—(होस में आके) हाय प्यारी सखी, हाय क्या तुम्हारा यही होना था हाय यही बदी थी। वाह रामचन्द्र वाह! तुमको क्या कहें? आत्रेयीजी जब जङ्गल में सीताजी को छोड़ लछमणजी लौट गये तब क्या हुआ आप जानती हैं ?

आत्रेयी—न।

वनदेवी—हाय जिस रघुकुल में वसिष्ठ और अरुन्धतीगुरु हों, बूढ़ी रानियाँ जीती हों, उसमें ऐसा क्योंकर हो गया ?

आत्रेयी—यह सब ऋष्यशृङ्ग के आश्रम में थे। आजकल तो बारह बरस का यज्ञ जो ऋष्यशृङ्गजी करते थे वह समाप्त हो गया और ऋष्यशृङ्ग ने सब को पूज कर बिदा कर दिया। तब अरुन्धती बोलीं हम बहू बिना सूनी अयोध्या न जायंगे और रामचन्द्र जी की मा ने भी यही अच्छा समझा। तब वसिष्ठजी ने उनसे कहा चलो वाल्मीकि के तपवन में चल कर रहें।

वनदेवी—तो अब राजा क्या कर रहे हैं ?

आत्रेयी—उन्होंने अश्वमेध यज्ञ छेड़ दिया है।

वासन्ती—हाय हाय तो क्या ब्याह भी कर लिया ?

आत्रेयी—न, न, ऐसी बात न कहो।

वनदेवी—तो सहधर्मचारिणी कौन है ?

आत्रेयी—सीता जी सोने की मूरति।

कहुं वज्रहु सम कठिन लखाहीं। फूलहु सम कहुं मृदु दरसाहीं।
जिनके चरित अलौकिक ऐसे। तासु चित्त समुझै कोउ कैसे॥

आत्रेयी—वामदेव ने मंत्रों से शुद्ध करके घोड़ा छोड़ दिया और शास्त्र के अनुसार उसके रखवारे भी साथ कर दिये गये। उनका सेनापति लक्ष्मणजी का लड़का चन्द्रकेतु दिव्यास्त्र देकर चतुरङ्ग सेना के साथ भेजा गया है।

वासन्ती—(स्नेह से, आंसू भरकर) लक्ष्मणजी के भी लड़का है, माता तुम ने मुझको जिला ही लिया।

आत्रेयी—इस बीच एक बाम्हन ने मरा लड़का राजद्वार पर रख छाती पीट कर कहा "ब्राह्मणों की रक्षा नहीं होती"। करुणामय रामचन्द्रजी ने उसका दोष अपने ही सिर लिया और उसको ढूंढ़ने निकले, तब आकाशवाणी हुई।

शूद्र एक तप करत है जग महं शम्बुक नाम।
वेगि जियावहु विप्रसुत काटि तासु सिर, राम॥

यह सुन महाराज कृपाण हाथ में ले विमान पर चढ़ शूद्र को ढूंढ़ते फिर रहे हैं।

वासन्ती—शंबूक शूद्र इसी जनस्थान में तपस्या कर रहा है तो रामचन्द्र जी फिर इस को शोभा देंगे।

आत्रेयी—अब हम जांयगे।

वासन्ती—अत्रेयी जी जो इच्छा आपकी। दिन भी बहुत चढ़ आया है। देखिए:—

तीर के रूख लखौ जहं झोंझ में कुक्कुट बोल सुनावत हैं।
कांपत हैं जरसों जब मत्त ह्वै कुंजर सूंड़ खुजावत हैं॥
फूल गिराय गोदावरी ऊपर घाम में मानो चढ़ावत हैं।
कोटन ढूँढ़त छांह के खोदि कै छाल विहंग गिरावत हैं॥

(दोनों बाहर जाती हैं)

दूसरा अङ्क

(स्थान - दंडक वन)

(खड्ग हाथ में लिये श्रीरामचन्द्र जी आते हैं)

राम—जो ब्राह्मण बालक मरा ताहि जियावन काज ।
 मारु शूद्रमुनि पर दहिन कर कृपान यह आज ॥
 दुसह गर्भ सों जो दुखित ताहि निसारयो जोइ ।
 सोइ राम कर अंग तैं तोहि करुणा किमि होइ ॥

(खड्ग चला के)

राम ने तो अपने ऐसा किया अब भी ब्राह्मण का लड़का जी जाय

(शम्बूक एक देवता के रूप में आता है)

शम्बूक—महाराज की जय हो,

अभय करत जग यम सन साईं । जियो बाल मैं लही बड़ाई ॥
तोहि शम्बूक नवावत माथा । तारत लहब मरन तव हाथा ॥

राम—दोनों बातें हमारे मन की हुईं । तो तुम अपनी कड़ी तपस्या का फल पाओ,

 अति पवित्र सम्पति जहां जहँ आनन्द सुख साज ।
 मिले नित्यपद तोहि सो तेजयुक्त वैराज ॥

शम्बूक—यह बड़ाई मेरी सब आपके प्रसाद से है तपका फल नहीं । वरन तप ने भी बड़ा उपकार किया ।

 सरन देत तू अगहि तोहि खोजत मुनि ज्ञानी ।
 चल्यो सो खोजत मोहि कोस सत तजि रजधानी ॥
 रह्यौ यद्यपि अति तुच्छ, तऊ यह फल तपकेरा ।
 होत भला केहि काज, नाथ, ढूँडक कर फेरा ॥

राम—क्या यह दंडक है । (चारों ओर देख के) अरे

कहुं सुन्दर घनस्याम कतहुं धारे छबि घोरा ।
कहुं गिरि खोहन गूंजि बहत झिरनन कर सोरा ॥
तीरथ आश्रम सैल नदी कन्दर सब सोई ।

देखि परैं बनमाहिं रहे परिचित नित जोई॥

शम्बूक—जी हाँ दंडक ही है। आपने पहले रह कर

खर दूषन औ त्रिसिरा रन कीन्हें संहार।
हत्यारे निशिचर जहां चौदह सहस कुमार॥

जिससे जनस्थान के सिद्धक्षेत्र में हम ऐसे डरपोक भी निसंक फिर सकते हैं।

राम—क्या निरा दंडक ही नहीं जनस्थान भी है।

शम्बूक—जी हाँ। ये दक्खिन की ओर वही जनस्थान के जङ्गल हैं जहां खोहों में बड़े बड़े जन्तु रहते हैं जिन्हें देख रोयें खड़े होते हैं। देखिए

सुनसान कहुँ गंभीर बन, कहुं सोर बनपशु करत हैं।
कहुं लपट निसरत सुन अजगर साँस सन तरु जरत हैं॥
गिरिखोह महँ कछु जल भरे यह छुद्र खात लखात हैं।
अहिस्वेद गिरगिट पियत तहँ जब प्याससन घबरात हैं॥

राम—जनस्थान सो देखहूं जहँ खर कीन्ह निवास।
पिछले दिन को बात सब अब जनु लखों प्रकास॥

(चारों ओर देख के) वैदेही को बन सदा अच्छा लगता था। अरे क्या वही खोहें हैं? इससे भयङ्कर और क्या होगा?
(आंसू भर के) मधु के बासे बनन में करिहो तव संग बास।

कहि कहि सो यहि भांति नित करत सनेह प्रकास॥
करै चहै कछु ना करै राखत दुख नित दूरि।
प्रियजन रतन अमोल है जगत सजीवनमूरि॥

शम्बूक—अब इनका सोच करना व्यर्थ है, अब आप बीच के जङ्गल देखिये जहां पर्वतों पर उड़ते मोरों के कंठ की छवि चारों ओर फैली है। जहां घन पेड़ों की छाया कैसी नीलबरन है और मृग कैसे निसंक चर रहे हैं।

उमे बेत झिरनन के नीरा। फूल डारि बासत सरिनीरा॥

डारन बढि पढ़ि बहु गावत। निज जोबनमद प्रगट जनावत ॥
जामुन पकत कुंज भा कारा। बहत तहां अगनित जलधारा ॥
और भी

इन गिरि खोहन माहिं, भालू के बच्चे रहैं।
जब सब मिलि गुर्राहिं, गूंजि उठत है बन सकल ॥

राम—(आंसू रोक के) भैया अब तुम जाओ और पवित्र लोकों में हो के सुरलोक सिधारो।

शम्बूक—मैं पुराने ब्रह्मवादी अगस्त्य ऋषि को प्रणाम करके परमपद को जाऊंगा। (बाहर जाता है)

राम—देखौं आय आज फिर सोइ बन।
जहाँ रहे हम सब संग बरसन ॥
मुनि सम रहत धर्म मन लावत।
संसारिक रस महँ सुख पावत ॥

और भो—यह गिरि सोइ कूजत जहं मोरा।
फिरत मतमृग बन चहुं ओरा ॥
घने मोले रंग विपुल लखाहीं।
बेतस बोझ नदी तट पाहीं ॥

देखि दूर ही सों धरत जनु मेघन को तार।
गोदावरी नदी जहाँ सो प्रस्रवनपहार ॥
पहो के चुनि शिखर रह्यो खगराज अटाई।
नीचे हम सब रहत पर्ण की कुटी बनाई ॥
गोदावरि पर कुकत अब सुन्दर चहुं ओरा।
जेहि सुन्दर बन शोर करत मद भरि खग सोरा ॥
मिलत शाल के डाल सों इहँ हाथी मदअन्ध।
टुअ बहत पल्लव टुटत फैलत कडुई गन्ध ॥

यही पंचवटी में बहुत दिन रहकर जो जो बात हम लोग ते थे उनके साखी यह देश हैं। यहां प्यारी की सखी

वासन्ती रहती है । हाय मुझ पर क्या अनर्थ फट पड़ा । अ

दहो देह प्रिय के सरिस ब्यापत शोक प्रचंड ।
मारयो जनु अति वेग सो हिये वज्र को खंड ॥
हिय की पिरकी सी मनो गई फूटि यहि काल ।
बाढ़ि शोक स्वांसा हरत करि पहिले बेहाल ॥

तो अब मैं पुराने परचे हुए ठिकानों को देखूं। (देखकर) अरे पृथिवी कैसी नई सी देख पड़ती है ।

जहां रह्यो सरिसोत आजु रेता तहँ सूखा ।
बिरले तरु भे घने घने बिरले भए रूखा ॥
बहु दिन पीछे देखि और हो वन यहि जाना ।
देखि पहारन ठांव जात पुनि सोई पहिचाना ॥

हाय मैं छोड़ता भी हूँ तो भी पञ्चवटी का स्नेह मुझे खींच लेता है (करुणा से)

प्रिया सहित सुखि सन जहां बहुत दिन दिये बिताय ।
करैं अजहुं जाकी कथा बार बार सुख पाय ॥
प्रियाहीन है राम अब धारत पापी प्रान ।
पंचवटी तजि जाय सो राखै तासु न मान ॥

(शम्बूक आता है)

शम्बूक—श्री महाराज की जय हो । अगस्त्यजी ने मेरे मुंह से श्रीमहाराज का इस बन में आना सुनकर कहला भेजा है कि "लोपामुद्रा आरती लिए विमान पर से आप को उतारने को खड़ी है और सब महर्षि भी आप की राह देख रहे हैं, तो कृपा करके हम को दर्शन दीजिये । पुष्पक तो बहुत तेज जाता है अश्वमेध के [illegible] राजधानी पहुंचा देगा ।"

राम—श्री मुनिजी की आज्ञा ।

शम्बूक—श्रीमहाराज, पुष्पक इधर फेरिये [illegible]

शम्बूक—श्रीमहाराज देखिये, देखिये,

क्रौंचावत पहार यह आगे। ऊपर तासु बांस बहु लागे॥
तिनके सघन कुंज बन माहीं। दिन हूँ कहं उलूक घुघुवाहीं॥
सुनि सुनि धुनि वायस भय खाईं। तरुकोटर महं रहैं लुकाई॥
उड़ै इहां इत उत बहुमोरा। सुनत तासु कूँकन कर सोरा॥
बरगदतरु के कोल पुराने। भागत अहिचहुं दिसि घबराने॥

और भी, यह दक्खिन के सैल जहां गोदावरिनीरा।
गूंजत खोहन माहि करै धुनि प्रबल गंभीरा॥
नील रंग के सिखर लसैं बादल जहँ कारे।
सरि संगम यह पुण्य बिमल उज्जल जल धारे॥

जल मिलत धाय उठि लहर लखु एक एक कहं दलि मलत।
करि सोर घोर दोउ नीर पुनि एकहिं संग मिलिकै चलत॥

(दोनों बाहर जाते हैं)

तीसरे अङ्क का विष्कम्भक।

(स्थान—दण्डक बन)

(दो नदी देवियां तमसा और मुरला आती हैं)

तमसा—मुरला सखी क्यों घबड़ाई सी हो?

मुरला—तमसा जी मुझे अगस्त्यजी की स्त्री लोपामुद्रा ने गोदावरी जी से यह कहने को भेजा है कि "तुम जानती हो जब से बहू से अलग हुए तब से

रामशोक गम्भीरता सन नहिं प्रगट लखाय।
पै गजपुट के पाक सम उर नित जारत जाय॥

और अपनी प्यारी पर इतना कष्ट पड़ने से सोच इतना बढ़ गया है कि रामचन्द्रजी बहुत ही दुबले हो गए हैं। उन्हें देख मेरा कलेजा कांप उठा। अब लौटते हुए रामचन्द्र पञ्चवटी की वह जगहें देखेंगे जहां सीता के साथ सुख से रहे थे।

इस से मेरे मन में पद पद पर रामचन्द्र को दुख और धोखा पाने की शंका होती है। ऐसी अवस्था में बड़ा भारी दुख होगा इस से गोदावरी जी तुम सावधान रहो।

खैंचि पद्म की गन्ध अति सीतल वायु चलाउ।
रामहिं बेसुध होत लखि बारम्बार जियाऊ॥"

तमसा—स्नेह से यह बात सदा उचित है कि कृपा रक्खें पर राम जी को होश में लाने का बड़ा भारी उपाय पास ही है।

मुरला—कौन सा ?

तमसा—सुनिए पहिले जब वालमीकजी के तपवन में सीता जी को लछिमन जी छोड़ कर चले गए तब सीताजी प्रसव की पीर से घबरा कर गंगाजी की धारा में कूद पड़ीं। वहीं उनके दो लड़के हुए और उन्हें भगवती धरती और गंगा रसातल को लेगई। दूध बढ़ाने के पीछे गंगाजी ने दोनों लड़के बालमीक जी को सौंप दिये।

मुरला—(अचरज से)

ऐसन पर बिपतिहु परे अचरज होत अपार।
जहां देव मुनि से पुरुष करन लगत उपकार॥

तमसा—अब शम्बूक को मारने के लिये जनस्थान में रामचन्द्र का आना सरयूजी के मुख से सुन भागीरथी जी गोदावरी से मिलने आई हैं।

मुरला—भगवती ने अच्छा बिचारा। जब रामजी राजधानी में रहते हैं तब लोगों की रक्षा के लिये काम करने से चित्त बहला रहता है। जब अकेले होंगे और शोक ही उनका साथी होगा तब तो पंचवटी में आना उनके लिये अनर्थ ही है, सो अब सीतादेवी उनका चित्त कैसे बहलावेंगी।

तमसा—भगवती गंगाजी ने कहा है "बेटी सीता, आज भैया कुश लव के बारहवें बरस की बरसगांठ का दिन है, सो

आज अपने कुल के परम गुरु पवित्र पापनाशन सूर्यदेवता को अपने हाथ के तोड़े फूलों से पूजो और जब तुम पृथिवी पर चलोगी तो तुमको हमारे प्रभाव से वनदेवियां भी न देख सकैंगी मनुष्य की कौन गिनती है" मुझसे कहा है "तमसा बेटी, जानकी तुमको बहुत चाहती है इस से तुम इन के साथ रहो" अब मैं भी उन्हीं के कहने से आई हूँ।

मुरला—मैं भी इस बात को लोपामुद्राजी से कह दूं। मैं समझती हूँ कि रामचन्द्र जी भी अब आगये होंगे।

तमसा—वह देखो इस गोदावरी कुण्ड से निकल कर

पीयर दूबर गात कृसा। वन आवत छिटके मुख केसा॥
मानहुं बिरहव्यथा तन धारी। सोकमूर्ति सी जनक कुमारी॥

मुरला—वन पहुव के हरिस तुरत हरठल सों तोरा।
हृदय सुखावत तासु शोक बहु दिन कर घोरा॥
जारत है दिन रैन तासु पीयर तन छामा।
ज्यों केतकि के गर्भपत्र कातिक के घामा।

(दोनों बाहर जाती हैं)

तीसरा अङ्क।

[स्थान—पंचवटी]

(परदे के पीछे) अरे दौड़ो दौड़ो बड़ा अनर्थ हुआ चाहता है।

(फूल चुनने में लगी करुणा और चाव से देखती सुनती हुई सीता आती है)

सीता—यह तो मेरी प्यारी सखी वासन्ती बोल रही है।

(परदे के पीछे)

आगे नाचत देखि पल्लवन निज कर तोरी।
पाल्यो जो गजपोत नित्य मिथिलेशकिशोरी॥

सीता—उसका क्या हुआ? (फिर परदे के पीछे)

करिनी संग जलमाहिं रह्यो सो करत बिहारा।
ताहि मत्त गजराज झपटि भिरि चहत पछारा॥

सीता—(घबड़ा कर दो चार पग चल कर) आर्यपुत्र, बच्चे को बचाओ बचाओ, (सोच के) हाय हाय वेही बातें ... के कहने की बान पड़ गई थी अब फिर पंचवटी देखने से ... मुंह से निकलती हैं। हाय! आर्यपुत्र! (मूर्छित होकर गिर पड़ती है)

(तमसा आती है) तमसा—बेटी उठो, धीरज धरो।

(परदे के पीछे) विमानराज यहीं ठहरो।

सीता—(घबड़ा कर कुछ चाव से) अरे जलभरे मेघ की नाई गंभीर बोली यह कहां से आई जो मेरे कानों को भर कर मुझ अभागिनी को भी सुखी कर रही है।

तमसा—(स्नेह से) सूने बन में सुनि कहा बेठिकाने की बात
भोरी सी घनगरज सुनि तू काहीं अकुलात

सीता—भगवती क्या कहती हो बेठिकाने की बात है मैं तो स्वरसंयोग से पहिचाना कि आर्यपुत्र बोल रहे हैं।

तमसा—हमने सुना है कि शूद्रतपस्वी को दंड देने इक्ष्वाकुवंशी राजा जनस्थान आये हुए हैं।

सीता—बहुत अच्छी बात है कि राजा अपना धर्म नहीं छोड़ते

(परदे के पीछे)

ए गोदावरि तट गिरि आली। जिनके गुहा बहुत इन माहीं॥
तह खग मृग जहं बन्धु समाना। लहे प्रिया संग जहँ सुख नाना॥

सीता—हाय यह तो सबेरे के चन्द्रमा की नाईं पीले और दुबले हुए मैं अपने अच्छे और गंभीर अनुभावही से पहिचाने जाते हैं। हाय! सखी मुझे संभालो। (मूर्छित होकर गिरती है)

तमसा—(पकड़ के) बेटी धीरज धरो ...

(परदे के पीछे)

तमसा—(आपही आप) यही तो गङ्गाजी ने भी विचारा था (फिर परदे के पीछे) हा प्यारी विदेहराजकुमारी! हाय दंडक बन की संगिनी! (ऐसा कहकर बेसुध होकर गिर पड़ता है)।

सीता—हाय हाय आर्यपुत्र मुझ अभागिनी का नाम लेकर आंखें बन्दकरके बेसुध होगये। हाय कैसे अचेत होकर धरती पर गिर पड़े। भगवती बचाओ बचाओ, आर्यपुत्र को जिलाओ।

तमसा—बेटी, तूही कौसलनाथ को यहि छन बेगि जियाउ।
तेरेहि प्यारे हांथ सों परसन जोग उपाउ॥

सीता—अच्छा। जो भगवती की आज्ञा।

[तमसा के साथ जल्दी से बाहर जाती है]

[दूसरा स्थान—जनस्थान बन]

[पृथिवी पर पड़े कुछ प्रसन्न रामचन्द्र देख पड़ते हैं
सीता जी उनको छू रही हैं—तमसा खड़ी है]

सीता—[कुछ हर्ष से आपही आप] बड़ी बात हुई कि त्रिलोकनाथ फिर जी उठे।

राम—अरे यह क्या है?

हरिचन्दन के रस महं बोरे। कै छिरके शशिकिरन निचोरे॥
संजीवनि सम हिय महँ लागत। जरे जीव मन यहि छन जागत॥
यह सोइ परिचित परसपियारा। तन मन सकल जियावनहारा॥
दुख मूर्छा सो बेगि नसाई। मद सम रहत सकल तन छाई॥

सीता—[घबड़ाहट से कांपती हुई हट कर] मेरे लिये इतना ही अब बहुत है।

राम—[बैठ के] क्या प्यारी सीतादेवी ने मुझ पर कृपा की है।

सीता—हाय हाय तो क्या आर्यपुत्र मुझे ढूंढेंगे?

राम—अच्छा तो अब देखूं।

सीता भगवती अब चलिये भाग चलें। जो कहीं देख
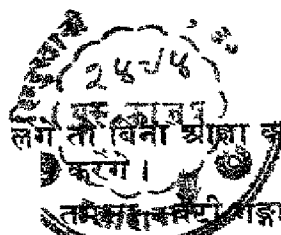
लगें तो बिना आज्ञा के पास आने के लिये महाराज बहुत
करेंगे ।

तमसा—कल्याणी गङ्गाजी के प्रभाव से तुम्हें वनदेवियां भी नहीं देख सकीं !

राम—प्यारी जानकी !

सीता—[क्रोध से] आर्यपुत्र ! तुम्हारी यह बातें अब नहीं फबतीं । (आंसू भरके) और क्या कहूँ मैं भी ऐसी पत्थर की हूँ कि जिनका दर्शन ऐसा दुर्लभ होगया है वही आर्यपुत्र मुझे ऐसा कह कर पुकारते हैं मैं उनसे निठुराई करती हूँ । मैं इनका मन जानती हूँ, ये मेरा ।

राम—(चारों ओर देख के) हाय क्या कोई नहीं है ?

सीता—भगवती तमसाजी, इन्होंने मुझे बिना कारन तज दिया तो भी इनको ऐसा देख मेरा चित्त कैसा हो रहा है मैं कुछ कह नहीं सकती ।

तमसा—बेटी हम जानती हैं ।

दुख पाय यदपि रहत कछुक उदास रही निरास है ।
बहु दिनन लागि वियोग सहि संयोग बस अब पास है ॥
करुणा वचन सुनि प्रेम बस दुख लहत प्रियहि निहारिकै ।
भरि उठत हिय महं नेह एक छन दुःख सकल बिसारिकै ॥

राम—रानी, मूरतिमान प्रसाद तव परस नेह मकरन्द ।
कितै गई सुखमूल तैं अजहूँ देत अनन्द ॥

सीता—ये वही आर्यपुत्र की बातें हैं जिनसे गाढ़ा स्नेह जाना जाता है और सुख मिलता है । इन्होंने बिनाकारन मुझे छोड़ भी दिया है तो भी मैं अपना जन्म सुफल समझती हूँ ।

राम—कहां, यहां प्यारी कहां । यह तो मेरे चित्त का धोखा है । सोचते सोचते जान पड़ता है कि सामने आगई ।

(परदे के पीछे 'हाय हाय आगे नाचत' इत्यादि फिर सुना जाता है)

राम—(करुणा और घबराहट से) उसका क्या हुआ ?
(परदे के पीछे 'करिनी सङ्ग इत्यादि' फिर सुना जाता है)

सीता—अब उसका कौन बचाने वाला है ?

राम—कहां है, कहां, वह पापी कहां, जो प्यारी के बच्चे और उसके जोड़े पर दौड़ता है ? (उठते हैं)

(घबड़ाई हुई बासन्ती आती है)

बासन्ती—क्या महाराज रघुनाथ जी आये हैं ?

सीता—क्या मेरी प्यारी सखी बासन्ती है ?

बासन्ती—महाराज की जय हो !

राम—(देख के) क्या रानी की प्यारी सखी बासन्ती है ?

बासन्ती—महाराज चलिये चलिये जटायुगिरि की चोटी के दक्खिन सीतातीर्थ की राह गोदावरी के उत्तर महारानी के बच्चे से मिलिये ।

सीता—हाय बाबा जटायु आज तुम्हारे बिना जनस्थान सूना हो गया !

राम—हा इन बातों के सुनने से कलेजा फटा जाता है ।

बासन्ती—इधर चलिए महाराज, इधर ।

सीता—भगवती क्या सच है मुझे बनदेवता भी नहीं देख सक्ते ?

तमसा—बेटी, गङ्गाजी का प्रताप सब देवताओं से बढ़कर है, तुम क्यों डरती हो ।

सीता—तो चलो हम लोग भी पीछे पीछे चलें ।

(सब बाहर जाते हैं)

[तीसरा स्थान—जनस्थान, गोदावरीतट, एक बन]

(श्रीरामचन्द्र सीता तमसा और बासन्ती आती हैं)

बासन्ती—महाराज बधाई है, महारानी का बच्चा जीत गया ।

राम—जियो बच्चे ।

राम—(करुणा और घबराहट से) उसका क्या हुआ ?
(परदे के पीछे 'करिणी सङ्ग इत्यादि' फिर सुना जाता है)

सीता—अब उसका कौन बचाने वाला है ?

राम—कहाँ है, कहां, वह पापी कहां, जो प्यारी के बच्चे और उसके जोड़े पर दौड़ता है ? (उठते हैं)

(घबड़ाई हुई वासन्ती आती है)

वासन्ती—क्या महाराज रघुनाथ जी आये हैं ?

सीता—क्या मेरी प्यारी सखी वासन्ती है ?

वासन्ती—महाराज की जय हो !

राम—(देख के) क्या रानी की प्यारी सखी वासन्ती है ?

वासन्ती—महाराज चलिये चलिये जटायुगिरि की चोटी के दक्खिन सीतातीर्थ की राह गोदावरी के उत्तर महारानी के बच्चे से मिलिये।

सीता—हाय बाबा जटायु आप [illegible] बिना जनस्थान सूना हो गया !

राम—हा इन बातों के सुनने से कलेजा फटा जाता है।

वासन्ती—इधर चलिए महाराज, इधर।

सीता—भगवती क्या सच है मुझे वनदेवता भी नहीं देख सके ?

तमसा—बेटी, गङ्गाजी का प्रताप सब देवताओं से बढ़ कर है. तुम क्यों डरती हो।

सीता—तो चलो हम लोग भी पीछे पीछे चलें।

(सब बाहर जाते हैं)

[तीसरा स्थान—जनस्थान, गोदावरीतट, एक वन]

(श्रीरामचन्द्र सीता तमसा और वासन्ती आती हैं)

वासन्ती—महाराज बधाई है, महारानी का बच्चा जीत गया।

राम—जियो बच्चे।

सीता—अरे यह भी इतना बड़ा हो गया !

राम—आह रानी तुम भी बड़भागिनी हो ।

नव दसन निकसन बदन महं जो नवल कली [illegible]
रो पाठ लवलीपत्र खींचो सुगन्धित निज [illegible]
सो पुत्र तव मदमत्त हाथिनकोर औरनबाहन [illegible] ।
कल्यानसुख जो तजनवद अब तासु नहिं [illegible]

सीता—बच्चे, तुम कभी अपने जोड़े से अलग [illegible]

राम—वासन्ती सखी देखो, देखो, बच्चे ने [illegible]
को मानने की चतुराई भी सीखी है ।

खेल सो तोरि मृनाल के खंडहि सो कर्निकनि [illegible]
फूले सरोज के बासे सुनीर को सूंड़ से डारि [illegible]
सीकर वारि के बारहि बार शरीर पै [illegible]
पत्र समेत मृनाल के दंड को भेद में छत्र [illegible]

सीता—भगवती यह तो ऐसा हो गया, न [illegible]
अब कैसे हुए होंगे ?

तमसा—जैसा यह है वैसे ही वह भी होंगे ।

सीता—मैं ऐसी अभागिन हूँ कि अकेले [illegible]
अलग नहीं लड़कों से भी अलग हूँ ।

तमसा—होतव्यता ही है ।

सीता—मैं ने बच्चे भी जने तो क्या जो उनके [illegible]
दांत चमकते [illegible] मोरपंख माथे में [illegible]
वाले मुहं बार [illegible] चूमे ।

तमसा—देवता के प्रसाद से ऐसा होगा ।

सीता—भगवती लड़कों की सुध आने से मेरी छातियों में
दूध भर आया है और उनके पिता पास होने से इस छन मैं
संसारिनी हो गई हूँ ।

तमसा—इस में क्या कहना है । सन्तान अपने माता
पिता के परम प्रेम का मेल है

आय, यही

है देही, हा

— हरि

होगी,

को हवाओ बन

—देवी, तुही कौसला

तेरेहि प्यारे ?

—अच्छा! ओ भगवन्

[तपस्या के साथ

[दूसरा ध्यान—

पृथिवी पर पड़े कुछ प्रस

ला जी उसको छू दें

हाँ लें आप

राम—(करुणा और घबराहट से) उसका क्या हुआ ? (परदे के पीछे 'कामिनी रङ्क इत्यादि' फिर सुना जाता है)

सीता—अब इसका कौन बचाने वाला है ?

राम—कहां है, कहां, वह पापी कहां, जो प्यारी के बच्चे और उसके जोड़े पर दौड़ता है ? (उठते हैं)

(घबड़ाई हुई वासन्ती आती है)

वासन्ती—क्या महाराज रघुनाथ जी आये हैं ?

सीता—क्या मेरी प्यारी सखी वासन्ती है ?

वासन्ती—महाराज की जय हो !

राम—(देख के) क्या रानी की प्यारी सखी वासन्ती है ?

वासन्ती—महाराज चलिये चलिये जटायुगिरि की चोटी के दक्खिन सीतातीर्थ की राह गोदावरी के उतर महारानी के बच्चे से मिलिये ।

सीता—हाय बाबा जटायु आज ! [illegible] ऐसा जनस्थान सूना हो गया !

राम—हा इन बातों के सुनने से कलेजा फटा जाता है ।

वासन्ती—इधर चलिए महाराज, इधर ।

सीता—भगवती क्या सच है मुझे वनदेवता भी नहीं देख सके ?

तमसा—बेटी, गङ्गाजी का प्रताप सब देवताओं से बढ़ कर है, तुम क्यों डरती हो ।

सीता—तो चलो हम लोग भी पीछे पीछे चलें ।

(सब बाहर जाते हैं)

[तीसरा स्थान—जनस्थान, गोदावरीतट, एक वन]

(श्रीरामचन्द्र सीता तमसा और वासन्ती आती हैं)

वासन्ती—महाराज बधाई है, महारानी का बच्चा जीत गया ।

राम—जियो बच्चे !

सीता—अरे यह तो इतना बड़ा हो गया !

राम—आह रानी तुम भी बड़भागिनी हो।

नव कुन्द निसरत बदन महं जो दसन कली रसाल लै।
सो पाठ तव नीपज्य ओठो तुतुरि जिन अब कान में।
सो पुत्र तव मनमत्त हाथिनिकेर ओलनहार भो।
कल्यानमुख जो नकवय कत लाहु लेहि अधिकार सो।

सीता—बच्चे, तुम कभी अपने जोड़े से अलग न पड़ो।

राम—जानकी सखी देखो, देखो, बच्चे ने अपनी प्यारी को मानने की चतुराई भी सीखी है।

खेलत तोरि मृनाल के खंडहि सो करेनीहि खिलावत है।
फूले सरोज के बासे सुनीर को सूंड़ से डारि पियावत है।
सीकर वारि के बारहिं बार शरीर पै ताहु सिंचावत है।
एक सर्मेत मृनाल के दंड को नेह से छत्र लगावत है।

सीता—भगवती यह तो ऐसा हो गया, न जानूं कुश और लव कैसे हुए होंगे ?

तमसा—जैसा यह है वैसे ही वह भी होंगे।

सीता—मैं ऐसी अभागिन हूं कि अकेले आर्यपुत्र ही से अलग नहीं लड़कों से भी अलग हूं।

तमसा—होतव्यता ही है।

सीता—हमें ने बच्चे भी जने तो क्या जो उनके छोटे छोटे दांत चमकते [illegible] तोतले बोल माथे में झुलाझुला मुसक्याते मुहं आर्य[illegible] चूमे।

तमसा—देवता के प्रसाद से ऐसा होगा।

सीता—भगवती लड़कों की सुध आने से मेरी छातियों में दूध भर आया है और उनके पिता पास होने से इस छन मैं संसारिनी हो गई हूं।

तमसा—इस में क्या कहना है। सन्तान अपने माता पिता के परम प्रेम का मेल है

हैं जिन निज कर कमल सन बीन घास सँवार ।
नव मृग खग पोषे जहाँ जनकसुता बहुवार ॥
देखि देखि सोइ उपजत चित अति सोक प्रचंड ।
फटत हियो पाषाण ज्यों गलत होत सतखंड ॥

वासन्ती—महाराज मैं पूछती हूं कुंवर लछमनजी अच्छे हैं ?

राम—(आपही आप) अरे महाराज ऐसा बेरुखे का नाम लेकर पुकारती है और आंखों में आँसू भर, रुक रुक कर लछमण ही का हाल पूछती है, सो हो न हो इसने सीता का हाल सुन लिया है (प्रकाश) हां लछमणजी अच्छे हैं । (रोते हैं)

वासन्ती—महाराज, आप ऐसे कठोर क्यों हो गये ?

सीता—वासन्ती सखी, तुम ऐसी बात क्यों कहती हो । आर्यपुत्र सब से मीठी बोल सुनने के जोग हैं, न कि मेरी सखी से

वासन्ती—तू हुती हिय तू नयनाना । अमिय अंग हग जीतिसमाना ॥
ऐसे कहि भुलाइ सोइ भोली । नेहि, हा ! कहिय काह मुह खोली ॥

(बेसुध हो जाती है)

राम—इसने ठीक ही किया जो बात छोड़ कर बेसुध हो गई । सखी, उठो जागो ।

वासन्ती—(जगा के) तो आप ने ऐसा अकाज क्यों किया ?

सीता—वासन्ती, ये बातें रहने दो ।

राम—लोग नहीं चाहते थे ।

वासन्ती—क्यों ?

तमसा—उरहना ठीक है ।

राम—वही जानें ।

वासन्ती—हे कठोर ! जस तुमहिं पियारा ।
कै न अजस तुम घोर बिचारा ॥
भयो काह मृगनैनिहि तेहि बन ।
का सोचहु रघुपति तुम निज मन ॥

सीता—सखी वासन्ती तुम बड़ी कठोर हो जो ऐसे जले आर्यपुत्र को और भी जला रही हो।

तमसा—यह वह कुछ थोड़ा ही कह रही है, स्नेह और शोक कहला रहा है।

राम—सखी, क्या सोचना है ?

चितवति सोइ कुरंगबाल समाना। चलत गर्भबस तन अलसाना॥
कोमल तासु शरीर सुहावा। बन महँ अवसि निशाचर खावा॥

सीता—आर्यपुत्र मैं जीती हूं।

राम—हाय प्यारी जानकी, कहां हो ?

सीता—हाय, हाय, आर्यपुत्र का रोते २ गला बैठ गया है।

तमसा—बेटी इनका रोना ही ठीक है। दुखियों का दुख ऐसेही मिटता है, क्योंकि

नीर निकारि बहावहीं भरै पूर जब ताल।
त्यों सोक बस कुक किए चितक्षोभ घटिजात॥

विशेष कर के रामचन्द्रजी को कईप्रकार के दुख इस संसार में हैं।

पालन को सब जगत ताय चित विधि अनुकूला।
मुरझावत चित सोक घाम कुम्हलत ज्यों फूला॥
आपहि करि कै त्याग वियोगहु सुलभ न होई।
पावत है चित सोक पाय अवसर अब सोई॥

राम—हाय हाय, फाटत है हिय सोक तऊ फाटै नहीं छाती।
देह तजै नाहिं मोह तऊ सुधि नाहिं भुलाती॥
जारत है तन ताप करै अजहूं नहिं छारा।
बेधत है उर दैव लेत नाहिं प्रान हमारा॥

सीता—ऐसी ही बात है।

राम—हे नगर के लोगो

रहिवो तुमहि सुहात न नियकर मो घर माहीं।

मांस नहीं छोड़े हैं । जनकजी ने तो मांस खाना छोड़ दिया है।

सौधा—क्यों ?

भांडा—जब से उन्होंने सीताजी की यह बड़ी विपत सुनी है तब से जोगी हो गये हैं। और अब चन्द्रद्वीपवन में कुछ दिन से तपस्या कर रहे हैं।

सौधा—तो यहां क्यों आए हैं ?

भांडा—अपने पुराने मित्र वाल्मीकिजी को देखने।

सौधा—और यहां महारानी से भेंट हुई कि नहीं।

भांडा—अभी तो वशिष्ठ जी ने महारानी को चिट्ठी में यह कहला भेजा है कि तुम को चाहिये कि आप विदेहराज से आके मिलो।

सौधा—तो अब ये बुड्ढे मिले हैं तो हम लोग भी लड़कों के साथ मिलकर छुट्टी मनावैं और खेलें।

(दोनों टहलते हैं)

भांडा—और वह देखो ब्रह्मवादी राजर्षि जनक वाल्मीकि और वशिष्ठ से मिलकर आश्रम के बाहर पेड़ की जड़ पर बैठे हैं।

जरत चित्त फिरि फिरि समुझि सीता सोक विसाल।
रूख सरिस धरि कोल महँ मनहु अगिनि की ज्वाल॥

(दोनों जाते हैं)

चौथा अङ्क।

[स्थान—[illegible] वाल्मीकि का आश्रम]

(जनकजी आते हैं)

जनक—परी हाय मम लोक पर ऐसी विपति गँभीर।
बेध्यो मोह मेरो हियो दूबल सकल शरीर॥
भे दिन बहु तउ नव सरिस बहत मनहुँ जलधार।
खैंचत सो मर्महिं गड़ि घटै न सोक अपार॥

मांस नहीं छोड़े हैं। जनकजी ने तो मांस खाना छोड़ दिया है।

सौधा—क्यों ?

भांडा—जब से उन्होंने सीताजी की यह बड़ी बिपत सुनी है तब से जोगी हो गये हैं; और अब चन्द्रद्वीपवन में कुछ दिन से तपस्या कर रहे हैं।

सौधा—तो यहां क्यों आए हैं ?

भांडा—अपने पुराने मित्र वाल्मीकिजी को देखने।

सौधा—और यहां सम्बन्धिन से भेंट हुई कि नहीं।

भांडा—अभी तो वसिष्ठ जी ने महारानी कौशिल्या से यह कहला भेजा है कि तुम को चाहिये कि आप विदेहराज से आके मिलो।

सौधा—तो अब ये बुड्ढे मिले हैं तो हम लोग भी लड़कों के साथ मिलकर छुट्टी मनावैं और खेलैं।

(दोनों टहलते हैं)

भांडा—और यह देखो ब्रह्मवादी राजर्षि जनक वाल्मीकि और वसिष्ठ से मिलकर आश्रम के बाहर पेड़ की जड़ पर बैठे हैं।

जरत चित्त फिरि फिरिहि मनु कि सीता सोक बिसाल।
कठ सरिस थरि कोख महँ मनहु अगिन की ज्वाल॥

(दोनों जाते हैं)

चौथा अङ्क ।

[स्थान—बिठूर वाल्मीकि का आश्रम]

(जनकजी आते हैं)

जनक—परी हाय मम सीय पर ऐसी बिपति गँभीर।
बेध्यो सोइ मेरो हियो कूढत सकल शरीर॥
भे दिन बहु तउ नव सरिस बहत मनहुँ जलधार।
छेदत सो पानहि तऊ घटै न सोक अपार॥

गुरू जी ने कहा है सो कीजिये।

कौशल्या—ऐसे समय पर मिथिला के राजा से मिलना है. मेरे सब दुख एक साथ उमड़े आते हैं, अपना हिया कैसे संभालूं?

अरु—इस में क्या सन्देह है।

सबो बन्धु बिछुड़न संतापा। रह्यो जदपि तन भरि महं ब्यापा।
पै देखे निज बन्धु पियारा। बहत मनहुं सोइ करि सतधारा॥

कौशल्या—हाय बहू की ऐसी दशा हो गई, अब उनको कौन मुंह दिखावें।

अरु—सम्बन्धी यह जनककुलभूषण मैथिलभूप।
याज्ञवल्क्य मुनि देव जेहि सिखयो वेद अनूप॥

कौश—यह महाराज के प्यारे मित्र बहू के पिता राजर्षि हैं। हाय इन से जब भेंट हुई थी उस दिन घर में त्योहार मनाया गया था। हाय अब वह दिन कहां?

जनक—(आगे बढ़ कर) अरुन्धती भगवती तुमको सीरध्वज वैदेह प्रणाम करता है।

आदि मुनिन के गुरु तेज के पुण्य निधाना।
तोहि सन निजहि पवित्र देवऋषि तव पति जाना॥
जग की मंगलखानि उषसदेवी की नाईं।
तीन लोक की वन्द्य नवौं तोहि सीस झुकाई॥

अरु—आप की परमजोति प्रकाशित हो और सूर्यनारायण आपकी रक्षा करें।

जनक—गृष्टिजी, महाराजाधिराज की माता कुशल से हैं?

कंचु—(आप ही आप) सच तो यह है कि इन्होंने हम लोगों का बहुत ही सिर नीचा कर दिया। (प्रकाश) महाराज, आप को न चाहिये कि महारानी का दुख बढ़ावें।

यह तो आप दुखी हैं। कब से रामचन्द्र का मुंह नहीं देखा। रामचन्द्र ने भी यह अनर्थ किया, क्या करें नगरवासी चारों ओर बुरी बुरी बातें फैलाते थे और अग्निदेव की शुद्धि की परतीत नहीं करते थे।

जनक—अरे, हमारी संतान का शुद्ध करने वाला अग्नि देव कौन है? हाय, हाय, राम ने तो हमारा सिर नीचा किया अब यह ऐसा बक बक करके हमारी पति और भी उतार रहा है।

अरुन्धती—(सांस लेकर) इसमें क्या संदेह है। अग्नि का नाम लेना तो बहू की निन्दा करनी है। सीता ही कहना बहुत है। हाय बहू—

बहू रही कुल कोरि रही गुन की कै चेरी।
बड़ी देखि तव भक्ति प्रीति दृढ़ रहि नित मेरी॥
रही बाल कै नारि जगतबन्दन के योगा।
वय मानै नहिं जाति गुणहिं पूजैं सब लोगा॥

कौशल्या—हाय मेरा दुख बढ़ता जाता है (बेसुध हो कर गिर पड़ती है)।

जनक—हाय हाय, यह क्या हुआ?

अरुन्धती—महाराज, है क्या!

यह लरिके, वह सुख सकल, वह नृप, वह परिवार।
तुमहिंबन्धु लखि सुधि भई सब की एकहि बार॥
भई बेसुध, नृप, तव सखी बूड़ीं दुःख अपार।
हियो होत कुलतियन को फूलहु से सुकुमार॥

जनक—हाय हाय, मैं भी बड़ा कठोर हूं, कि इतने दिन देखने पर भी अपने प्यारे मित्र को रानी को प्रेम से नहीं देखता।

समधी पूजनजोग मित्र पुनि परमपियारे।

दूजो हृदय समान अनंद मूरति जनु धारे॥
जीव प्रान कै देह सोऊ सन प्रिय जो कोई।
श्री दशरथ महाराज रहे मेरे सब सोई॥

अरुन्धती—हाय कब से इनकी सांस बन्द है!

जनक—हाय सखी (कमण्डल का पानी छिड़कता है)

कंचुकी—

होइ बन्धुसम सब सुखमूला। पहिले रहिविधि अति अनुकूला॥
भये वाम अब होत कठोरा। देत दुःख नित प्रति अति घोरा॥

कौशल्या—(होश में आकर) हाय बहू जानकी! कहां चली गई! हाय. एक दिन वह रहा कि ब्याह का सिंगार पहने मुसकाती रही, कमल ऐसा मुंह चमकता था. अँग अँग में से मानो चाँद की जोत निकलती थी. महाराज कहा करते थे कि यह हमारे रघुवंशियों की बहू हमारी तो जनक के नाते से बेटी सी है, बहू फिर आकर मेरी गोद में बैठ जा।

कंचुकी—और क्या—

नृप के रही पाँच सन्ताना। रामहिं तउ विशेष प्रिय माना॥
बहुन माँहि मिथिलेशकुमारी। रही शान्ता सरिस दुलारी॥

जनक—हाय प्यारे मित्र महाराज दशरथ, तुम ऐसे ही थे. तुमको कोई कैसे भूल सकता है?

पूजत हैं दामादकुल कन्या के पितु मात।
तुम उलट पूजा करी मेरी ऐसे नात॥
हर्यो काल तुम को भयो नातबीज कर नास।
मो जीवन धिक जियत ही मो को नरकनिवास॥

कौशल्या—बहू जानकी! क्या करूँ. मेरे पापी प्रान भी जकोड़ से जड़ गये हैं जो नहीं निकलते।

अरु—राजकुमारी! धीरज धरो और अपने आँसू भी रोक लो। और क्या तुम भूल गई जो ऋष्यश्रृङ्ग के आश्रम में

तुम्हारे कुलगुरू ने कहा था कि हुआ तो पर अन्त में कल्यान ही होगा।

कौशल्या—भगवती, मुझे ऐसी आस नहीं।

अरु—क्यों क्या, राजकुमारी तुम ने यह समझा कि झूठ कहा था। तुम ऐसी क्षत्री की रानी को ऐसा न समझना चाहिये। ऐसा ही होगा।

लखो जानि जो वाम्हन लोगा। तिन के वचन न संसय योगा॥
इन की बानि संग श्रिय रहहीं। ये नहिं कबहुं मृषा कछु कहहीं॥

(परदे के पीछे शोर होता है, सब सुनते हैं)

जनक—आज लड़कों को छुट्टी है, इसी से सब ऊधम मचा कर खेल रहे हैं।

कौशल्या—लड़कपन में थोड़े ही में सुख मिलता है। (देख के) अरे इन में यह कौन है जो भैया रामचन्द्र के से सुन्दर अंगों से आँखें जुड़वा रहा है।

अरु—(अलग हर्ष से आंसू भर के) यही भागीरथी जी ने बताया था, पर नहीं जानती कि कुश और लव में यह कौन सा है।

जनक—नील कमल सम श्याम, राखे चोटी सीस पै।
कौन नयन अभिराम, राजत बरुअन माँहि यह॥
मेरे रघुकुलचन्द, फिर मानहु बालक भए।
नैनन देत अनन्द, अमियसलाई के सरिस॥

कंचु—यह लड़का क्षत्री जाति का ब्रह्मचारी देख पड़ता है।

जनक—ठीक है, देखो।

चोटिहि चूमत बान के पुंख दोऊ दिशि पीठि कसे हैं तुनीरा
ओढ़े हैं खाल रुरू मृग की अति पावन भस्म लगाए शरीरा
मूंज की डोर कसे कटि में तन बांधे मजीठ के रंग को चीरा
अक्ष की माल कलाई पै हाथ में पीपलदंड गहे धनु बीरा।

अरुन्धती: भगवती, आप क्या समझती हैं कि लड़का किसका है

अरु—हम भी तो आज ही आए हैं।

जनक—गृष्टि जी, हम को बड़ा कौतुक है; जाके वाल्मीकि जी से पूछो और इस लड़के से कहो कि कुछ बूढ़े तुम को देखा चाहते हैं।

कंचुकी—जो आज्ञा। (बाहर जाता है)

कौशल्या—क्या ऐसे कहने से आ जायगा ?

अरु—भला ऐसा रूप है तो उसमें शील न होगा ?

कौशल्या—(देख के) अरे देखो गृष्टि की बात बड़े आदर से सुन, ऋषि के लड़कों को छोड़ वह लड़का इधरही आरहा है

जनक—(देख कर) अरे यह क्या है ?

दियें ध्यान यहि मांहि लखिय महिमा अधिकाई।
विनय बालपन हेत लगै सोइ परम सुहाई॥
है मो मन थिर यद्यपि तऊ तेहि बल करि मोहा।
खोंचत है तेहि ओर छोह चुम्बक जिमि लोहा॥

(लव आता है)

लव—(आप ही आप) बड़े हैं तो क्या, जिनका मैं नाम तक नहीं जानता उनको कैसे प्रणाम करूं। (सोच के) परन्तु बड़ों को प्रणाम करने में कुछ दोष नहीं लिखा है।

(विनय से झुककर) लव आप लोगों को प्रणाम करता है।

अरुन्धती और जनक—चिरंजीव।

कौशल्या—जियो भैया।

अरु—आओ भैया। (लव को गोद में लेकर अलग) आज बड़े भाग से मेरी गोदही नहीं भरी वरन् मेरा मनोरथ भी पूरा हो गया।

कौशल्या—भैया यहां तो आओ (गोद में लेकर) अरे यह तो खिलते नीलकमल के ऐसे सांवले शरीर और कमल के

केसर ऐसे लालकंठ, और अपनी बोलही से नहीं रामचन्द्र सा लगता है, वरन् कोमल शरीर का परस भी भैया का सा है। भैया, तुम्हारा मुंह तो देखें। (ठुड्डी उठा के देखके) राजर्षि आप नहीं देखते कि इसका मुंह बहू के मुंह का अनुहार है?

जनक—हम देखते हैं सखी।

कौशल्या—अरे, मेरा चित्त सोच सोच घबड़ा रहा है।

जनक—देखो री श्री रघुनाथकको यह बाल में देखियमूरतिसारी।
दर्पन में प्रतिबिम्ब परो जनु सोइ अकार सोई छवि धारी॥
सोइ सुभाव सोई अनुभाव हैं वैसोही बोल मनोहर प्यारी।
सोचित क्यों घबरात है देव, वृथा मनसें कुछ सोचि विचारी॥

कौशल्या—भैया तुम्हारी मां हैं? कुछ बाप की सुधि है?

लव—न।

कौशल्या—तो तुम किसके लड़के हो?

लव—बाल्मीकि जी के।

कौशल्या—भैया यह क्या कहते हो?

लव—हम यही जानते हैं।

(परदे के पीछे) अरे सिपाहियो कुमार चन्द्रकेतुजी की आज्ञा है कि आश्रम के पास की भूमि पर कोई न जाय।

अरुन्धती और जनक—अश्वमेध के घोड़े की रखवारी में आज भैया चन्द्रकेतु यहां आते हैं, यह कैसी अच्छी बात है।

कौशल्या—भैया लछमन का लड़का आज्ञा देता है, यह अमृत सी बात सुन पड़ती है।

लव—आर्य! यह चन्द्रकेतु कौन है?

जनक—तुमने कभी राजा दशरथ के लड़के राम और लछमण को सुना है?

लव—वही न जो रामायण की कथा के नायक हैं?

जनक—तो फिर उसी लक्ष्मण के लड़के चंद्रकेतु को क्यों नहीं जानते?

लव—अरे उर्मिला के लड़के और मिथिला के राजर्षि के नाती!

अरुन्धती—(हँसके) कुमार कथा भली भांति जानते हैं।

जनक—जो तुम कथा पूरी पूरी जानते हो तो बताओ कि दशरथ के लड़कों को किन २ स्त्रियों से कौन २ लड़के हुए।

लव—यह कथा न हम लोगों ने पढ़ी न और किसी ने।

जनक—क्या कवि ने नहीं बनाई?

लव—बनाई है प्रकाशित नहीं की। उसके एक भाग का नाटक बना के अपने हाथ से लिखकर नाटकाचार्य भरत के पास भेजा है।

जनक—क्यों?

लव—वह उसे अप्सराओं से खेलावेंगे।

जनक—बड़े अचरज की बात है।

लव—वाल्मीकि जी न जानें उसको क्या समझते हैं। क्योंकि जिन चेलों के हाथ उसे भरत के आश्रम भेजा है उनके साथ रास्ते में भूल भटक के डर से धनुष बान बँधाकर हमारे भाई को कर दिया है।

कौशल्या—तुम्हारे भाई भी हैं?

लव—हैं न कुश जी।

कौशल्या—तुम से जेठे हैं?

लव—जी हां, उनका जनम पहिले हुआ था।

जनक—क्या भैया तुम दोनों जोड़िया हो?

लव—जी हां।

जनक—कहो तो कथा कहां तक बनाई गई है।

लव—झूठ मूठ लोगों के कलंक लगाने से राजा ने बबड़ा

यज्ञभूमि की जनमी सीतादेवी को घर से निकाल दिया र गर्भ से दुख पाती अकेली उनको जंगल में छोड़ लक्ष्मण लौट आये। यहां तक बनी है।

कौशल्या—हाय वह अकेली पड़ने पर तुम्हारे शरीर की ने क्या दशा की होगी?

जनक—हाय बेटी, अवसि पाय सो दुःख गंभीरा।

पुनि सो प्रसवकाल की पीरा॥

पुनि जब बनपशु निकट निहारा॥

"तात बचाइय" मोहिं पुकारा॥

लव—(अरुन्धती से) यह दोनों कौन है?

अरुन्धती—यह कौशल्या हैं, यह जनक जी हैं?

लव—(बड़े मान और कौतुक से देखता है)

जनक—अरे नगर के लोगों की दुर्मयादता! और राजा ाम का बेसमझ बूझ कर काम करना!

मेरे देखत ही भयो यह अनर्थ अति घोर।

अवसर चाप सराप को क्रोध दिखावत मोर॥

कौशल्या—भगवती बचाओ, बचाओ राजऋषि रूसे हैं, ल्दी मनाओ।

अरुन्धती—पाइ अनादर रिस करैं एहि विधि मानी लोग

राम निहारें पुत्र सम प्रजा पालने जोग॥

जनक—रहैं शान्त दोउ राम पँ सुत सम नाहि विचारि।

पुरवासी हैं नीच सब बाल वृद्ध औ नारि॥

(घबड़ाए हुए बटुए दौड़ते हुये आते हैं)

बटुए—कुंवर जी घोड़ा! घोड़ा! हमने सुना था कि नगरों में होता है सो आज अपनी आंखों देखा।

लव—घोड़ा? हां हमने घोड़े का नाम पशुसमाम्नाय और लड़ाई के वर्णनों में पढ़ा है। कहो तो कैसा है?

बटुए—सुनो :

पीछे है पूँछ बड़ी लटकाए सो बारहि बार हिलावत है ।
चारहि हैं खुर वाके, गरा अति लांबो, सो मूड़ उठावत है ।
खात है घास और आम बराबर, लीद तुरंग गिरावत है ।
आगे चलैं तेहि देख सखा न भजै अति वेग सो धावत है ॥

(दौड़ कर उसका हाथ पकड़कर खींचते हैं)

लव-(विनय और कौतुक से) देखिये सब मुझको खींचे लिये जाते हैं ।

अरुन्धती और जनक-हाँ जाओ, देख लो !

कौशल्या—भगवती, मुझ से तो बिना इसको देखे रहा नहीं जाता, तो आओ और कहीं से इसे देखें ।

अरुन्धती—अरे वह चंचल दूर निकल गया, कैसे देख पड़ेगा

(कंचुकी आता है)

कंचुकी-महाराज, वाल्मीकि जी ने कहा है कि अवसर पर आप को बनाया जायगा ।

जनक-बड़ा विचित्र है, यह क्या बात है, अरुन्धती जी सखी ... चलो, हम लोग आप चलकर वाल्मीकि जी से पूछें ।

(सब चले जाते हैं)

[दूसरा स्थान—तपोवन में एक दूसरी जगह]

(लव और बटुए आते हैं) ।

बटुए—देखिये कुंवर जी कैसा अचरज है ?

लव-देखा और समझ भी लिया, यह अश्वमेध का घोड़ा है ।

बटुए कैसे ?

लव—तुम भी बड़े मूर्ख हो । तुमने उस काँड में पढ़ा तो है । देखते नहीं सैकड़ों सिपाही हथियार बाँधे, कवच पहिने, धनुष लिये इसके साथ हैं । वह क्या सेना देख पड़ती है । न परतीत हो तो जाके पूछ लो ।

बटुए—अरे तो यह घोड़ा ऐसे क्यों फिर रहा है ?

लव—(आप ही आप) अरे अश्वमेघ जग जीतने वाले क्षत्रियों के बल दिखाने का यह है और सब क्षत्रियों के सिर नीचा करने का।

(परदे के पीछे)

यह तुरंग, यह जयध्वजा, यह वीरतापुकार।
रावनरिपु के, वीर नहिं जेहि सम यहि संसार॥

लव—(दुख से) कैसी जी जलाने की बातें कहते हैं?
बटुक—कुंवर जी तुम तो समझे होगे, यह क्या कह रहे हैं?
लव—अरे क्या संसार में क्षत्री नहीं रहे जो आप ऐसा कहते हैं?

(परदे के पीछे)

अरे महाराज के सामने कौन क्षत्री है?

लव—तुम सब बड़े नीचे हो।

जो ह्वै हैं सो होहिं ते, मोहि नाहिं कछु त्रास।
हरिहौं ध्वजा तुम्हारि मैं, बानन करि बल नास॥

सुनो जी पत्थर मार के इस घोड़े को इधर फेर दो, यह हिरनो में चरै फिरै, उधर न जाने पावै।

(एक सिपाही आता है)

सिपाही—(क्रोध और गर्व से) क्यों रे चंचल तू क्या बक बक करता है? निठुरसिपाही लड़के की भी कड़ी बात नहीं सहते। कुंवर चन्द्रकेतुजी पूर्व जङ्गल में घूमने गए हैं। जब तक वह न आवें तब तक तुम सब पेड़ की आड़ में होके भाग जाओ

बटुक—कुंवर जी घोड़े को जाने दीजिये। आप को सिपाही हथियार उठाकर डरा रहे हैं। आश्रम भी यहां से दूर है, चलिये हरिन की चाल से भाग चलैं।

लव—(हंस के) अरे क्या सचमुच हथियार उठा रहे हैं?
(धनुषउठा कर) अच्छा तो फिर,

दांत सरिस ह्वैं कोटि बजत गरजत अति घोरा।

लसैं जीभ सी डोरि चाप सो यहि छन मोरा ।
ग्रसन हेत संसार काल अब बदन पसारै ।
लोलन को यह सेन आज ताकी छवि धारै ॥
(सब टहल कर चले जाते

पांचवां अङ्क ।

[स्थान—आश्रम के पास बन]

(परदे के पीछे)

हे हे सिपाही ! घबड़ाओ न ! घबड़ाओ न ।
तुरङ्ग बेगि दौरावत । कोइन तिनहिं सुमंत हंकावत ॥
वेदार की ध्वजा हिलावत । चन्द्रकेतु सुनि रन यह आव
(सुमन्त सारथी के साथ रथ पर बैठा, धनुष हाथ
लिए घबड़ाया हुआ चन्द्रकेतु आता है)

चन्द्रकेतु—सुमन्त जी, देखिये, देखिये
छिपो मनहुं अंकुर नवा यह दिनपतिकुलकेर ।
मुनिबालक ब्याकुल किये सैनिकजन चहुंफेर ॥
फोरत गजमस्तक करै भयकारी टंकार ।
बढ़वत अचरज मो हिये डारि शरन की धार ॥
। अचरज है,
लाल किए कछु बदन कोप अति प्रबल जनावत ।
बार बार टंकार करत धनुकोटि बजावत ॥
चढ़ो समर सोइ झपटि पांचहूँ सिखा नचावत ।
बाल बीर वह तीर मेह के सम बरसावत ॥

सुमन्त—भैया, देव असुर सम तेज बिसेषी ।
धरे सुघड़ बालक यह देखी ॥
सुमिरहुं धरे धनुष निज हाथा ।
कौशिकमख रच्छत रघुनाथा ॥

चन्द्रकेतु—मेरा जी यह देख घबड़ाता है कि सब इस अकेले को मार रहे हैं।

यह बाल यदपि अकेल। तेहि सेन सब बगमेल॥
रन माहिं उड़ी जो धूरि। तेहि बीच चमकत भूरि॥
कर धरे प्रबल हथ्यार। पैदल तुरङ्ग असवार॥
रथ चलत करि झनकार। गज प्रबल घटा अपार॥
घन सरिस सन बरसाय। तेहि घेरि लीन्हो आय॥

सुमन्त—भैया, इकट्ठे रहने पर तो इनका यह हाल है, अलग अलग क्या होगा?

चन्द्रकेतु—सुमन्त जी जल्दी चलिये, देखिये इसने कितने सिपाही मार डाले। देखो

गिरि कुंजन में नागयूथ जो सोर मचावत।
तिनहूँ के यह शब्द कान में पीर उठावत॥
उपजत धुनि गंभीर बीर दुन्दुभी बजावत।
मिलि धनु के टंकार गूंजि आकास चढ़ावत॥
संग्रामभूमि बिन सीस धड़ कछु धावत लोटत परे।
जग भखत काल के दंत सन भरत पेट मानहु भरे॥

सुमन्त—(आप ही आप) हम इसके साथ चंद्रकेतु को कैसे लड़ने दें। (सोच के) क्या करें हम लोग इक्ष्वाकु के घर में पले हैं। जब काम पड़ जायगा तो क्या करेंगे।

चंद्र—(आश्चर्य और लाज से) हाय, क्या मेरे सिपाही सब तितर बितर हो गए।

सुमन्त—(रथ दौड़ा कर) भैया, देखो देखो वह वीर अब तुम्हारी बात सुन सकता है।

चंद्रकेतु—सुमंत जी, आख्यायिकों ने इसका क्या नाम बताया है।

सुमन्त—लव।

चंद्र—सुनो, वीर लव ।

का मिलिहैं तुमको भला सैनिक नीच हराइ ।
इत आओ मो सन भिरो तेजहिं तेज बुझाइ ॥

सुमन्त—कुंवरजी देखो देखो ।

बाल वीर तोहिं जानि बुलावत । सेना मथन छांड़ि इत आवत॥
घन गर्जत सुनि गजन विहाई । गर्वित बाल सिंह की नाईं ॥

(लव जल्दी से आता है)

लव—वाह राजपुत्र, वाह, तुम निःसन्देह इक्ष्वाकुवंशी हो जिससे मैं हारा सा जाता हूं ।

(परदे के पीछे शोर होता है)

लव-(जल्दी से लौट कर) अरे क्या सिपाही दल टूटने पर भी लौट कर मुझे घेर कर मारना चाहते हैं । हत तेरे नीचों को,रहो

बड़वानल के सरिस लगत जनु शैल प्रहारा ।
लीलै एकहि बार प्रबल यह क्रोध हमारा ॥
यह सेना को सोर चंड फैलत चहुं ओरा ।
चलत प्रलय को वायु सिंधु जल सम अति घोरा ॥

(टहलता है)

चन्द्रकेतु—अजी कुंवरजी ?

तुम गुनबस हो मित्र हमारे । यह सेवक वहि हेत तुम्हारे ॥
क्यों निज सेवक करहु संहारा । हम कासि है यह गर्व तुम्हारा ॥

लव—(हर्ष से होकर) वाह देखो सूर्यवंशी लड़के की बातें कैसी मीठी और कड़ी भी हैं । तो इससे हम कैसे मिलें ।

(परदे के पीछे शोर होता है)

लव—(क्रोध और दुख से) इन पापियों ने मुझ को हलाकान कर दिया । मुझे वीर से बातें तक करने नहीं देते ।

(उनकी ओर चलता है)

चन्द्रकेतु—देखिये, देखिये, देखने जोग है !

आगे गर्व समेत मेरी दिसि दौर लगावे ।
पीछे रोकत सेन सकल धनुवान चढ़ावें ॥
यहि अवसर यह बीर, दोऊ दिसि चलत बयारी ।
गहे इन्द्र को चाप नीरधर की छबि धारी ॥

सुमन्त्र—कुंवर जी तो इसको देख भी सकते हैं, हम तो विस्मय के मारे यह भी नहीं कर सकते ।

चन्द्रकेतु—सुनो सुनो क्षत्रियो,
यह चलत पैदल, तुम तुरग गज रथन पर असवार हो ।
मृगचर्म धारे बीर, तुम कसि कवच सहत प्रहार हो ॥
तुम सकल पूरे मर्द, यह एक बाल सुघड़ अकार है ।
जो करन लागे युद्ध यहि सम तुम सबन धिक्कार है॥

लव—[दुख से] अरे क्या हम पर तरस खाता है [सोच के] अच्छा तो समय बचाने को तब तक इन्हें जृम्भकास्त्र से बेसुध करदूं । (ध्यान करता है)

सुमन्त्र—यह अकस्मात सोर क्यों घटा जाता है ?

लव—अब मैं इस अभिमानी को देखूँगा ।

सुमन्त्र-भैया, हम समझते हैं इसने जृम्भक छोड़ा है ।

चन्द्रकेतु—इसमें क्या सन्देह है,
अन्धकार अरु बिजुतेज फैले जनु सङ्गा ।
चौंधियात सी डीठि परत सैनिक के अङ्गा ।
भे अचेत सब लोग चित्र की सी छबि धारत ।
अमित तेज को धाम अवसि जृम्भक यह मारत ॥
बड़ा अचरज है,
पेट में मानो पाताल के कुंजन बीच बटोरे अंधेरे हैं कारे ।
जोति लसैं चमकैं जनु पीतलखंड के आगि में लाल अंगारे ।
कल्प के बीतत होत प्रलै अति घोर प्रचंड बयार के मारे ।
चंचल बिज्जु समेत पयोद से जृम्भक छाए अकास में सारे ॥

सुमन्त—भला इसने जृम्भक अस्त्र कहां पाया ?

चन्द्रकेतु—हम समझते हैं कि वाल्मीक जी से पाया है।

सुमन्त—भैया वह हथियारों के विषय नहीं जानते, विशेष कर जृम्भकास्त्र का। क्योंकि,

मुनि कृशाश्व जृम्भक रचे अस्त्र तेज के धाम।
सो कौशिक मुनि को दिये तिन सन पाये राम॥

चन्द्रकेतु—और ऋषि मुनि भी जान सकते हैं जिनके तप-तेज का प्रकाश होता है।

सुमन्त—भैया सावधान हो जाओ, वह वीर आ गया।

दोनों कुमार—(एक दूसरे से) यह कुमार बड़े सुन्दर हैं (स्नेह और अनुराग से देखकर)

गुनको कै अधिकाइ मेल आकस्मिक होई।
पूर्व जन्म को नात अहै यहि सन कै कोई॥
सगो अहै कोउ नात जाहि हम जानत नाहीं।
जो यह छन यहि देख प्रीति उपजै मन माहीं॥

सुमंत—यह तो प्राणियों का धर्म ही है। किसी से किसी की प्रीति होती है। इसी से लोग कहते हैं कि आँख लगने से प्रीति होती है। इसी को बिना कारण का प्रेम भी कहते हैं।

सकै न मिटि सो नेह जो चित उपजै बिन हेत।
सो डोरी सी प्रीति की बांधि दोऊ हिय लेत॥

दोनों कुमार—(एक दूसरे से)

यहि बिलूर सम मंजु शरीरा। मैं केहि भांति चलाइव तीरा॥
पुलकत अँग मोर जेहि पाई। भेटन हित कदंब की नाई॥

बिना अस्त्र का मिलिय ताहि जिन बैर दिखावा।
है अस्त्रहु सो व्यर्थ विमुख जिन अस नहिं पावा॥
का कहिहै लखि विमुख देखि मोहि चलत हथ्यारा।
कारत है सब नेह कठिन वीरनव्यवहारा॥

सुमंत—(लव को देख, आप ही आप) चिरंजीव तू क्यों व्याकुल हो रहा है ?

रह्यो मनोरथबीज जो, दैव नसायो सोइ।
कटी लता जो आदि ही तहां फूल किमि होइ॥

चन्द्रकेतु—हम रथ पर से उतरते हैं।

सुमंत—क्यों ?

चन्द्रकेतु—जिस में इस वीर का आदर हो। और आप तो क्षत्रियों का धर्म जानते ही हैं कि रथपर चढ़े पैदल के साथ नहीं लड़ते।

सुमंत—(आपही आप) हाय हम तो बड़े संकट में पड़े,

कैसे बरजों करन को समरनीति की बात।
अति साहस के काम को अहवन हियो सकात॥

चंद्रकेतु—आप से तो हमारे चाचा और पिता भी अपने पिता का साथी जानकर धर्म की बात पूछते हैं तो आप अब क्या विचार कर रहे हैं ?

सुमंत—भैया, यही धर्म है जो तुम कहते हो।

यही सनातन धर्म है यहै समरआचार।
रघुसिंहन को है यही वीरचरितव्यवहार॥

चंद्रकेतु—आप ने ठीक कहा।

जग इतिहास पुराण औ सकल धर्म की नीति।
आपहि जानत है सबै भानुवंश की रीति॥

सुमंत—(आंखों में आंसू भर के गले लगा कर)

तव पितु इंद्रजीत के घालक। अहैं अबहिं कै दिन के बालक॥
ता के सुतहि धर्म की निष्ठा। भइ दशरथकुलकेरि प्रतिष्ठा॥

चंद्रकेतु—(दुख से)

भई सो काह हमारि, बिना प्रतिष्ठा जेठघर।
यह कुलदसा बिचारि, दुखी रहैं चाचा सबै॥

सुमंत–हाय चंद्रकेतु की बात सुने से छाती फटी जाती है।

लव—अरे मैं भी दुबधा में पड़ा हूँ।

बिकसत कुमुद देखि जिमि चन्दा। त्योंयहिलखि दृग लहै अनन्दा
यहि कहँ बाहु युद्ध की होई। तौ नहि लखौं और गति कोई॥
झनकि उठत खैंचत जब डोरी। खैंचैं धनुहि बांह अब मोरी॥

चन्द्रकेतु—(उतर कर) सुमन्त जी सूर्यवंशी चन्द्रकेतु प्रणाम करता है।

सुमन्त—अजित पुरुष तुमको मिलै तेज ककुत्स्थ समान।
नित्यदेव बाराह तव सदा करैं कल्याण॥

औरभी, गोतके आदिगुरु हैं पुरखे रन में तुम्हारे रविहोइं सहाई;
बंस तुम्हारे गुरू जो गुरून के राखैं सुखी तुमको मुनिराई।
बिष्णु को इन्द्रको अग्निको पौन को तेज मिलै तुमको समुदाई।
देई तुम्हैं जय राम औ लछमण चाप टंकारन मन्त्र की नाई।

लव—कुंवर जी, आप रथ पर बैठे ही अच्छे लगते हैं। कुछ आदर का काम नहीं।

चन्द्रकेतु—तो आप भी दूसरे रथ पर चढ़िये।

लव—सारथी जी, राजकुमार को रथ पर चढ़ा दीजिये।

सुमन्त—तो तुम भी उनकी बात मानो।

लव—अपने लिये जो लाभ की बात हो उस में किसी को विचार हो सक्ता है, पर हम जङ्गल के रहने वाले हैं, रथ पर चढ़ना क्या जानैं।

सुमन्त—भैया तुम बड़े चतुर हो, जो गर्व और सीधापन साथ ही जानते हो। जो कहीं तुमको राजा रामचन्द्र देखें तो प्रेम से उनका जी भर जाय।

लव—हमने सुना है कि वह राजा बड़े सुजन हैं (लाजसे)

यज्ञन के बैरी नहीं कछु कबहुंक हम लोग।
है काके रघुपति नहीं गुनबस पूजन जोग॥

क्षत्रियकुल द्रोही कहत कहे जु हयरखवार।
सो सुनि हमरेहु चित्त में उपज्यो कछुक विकार॥

चन्द्रकेतु—तो आप को चाचा के प्रताप की बड़ाई बुरी लगती है?

लव—अजी बुरी लगे, या न लगे, हम पूछते हैं कि राजा रघुनाथ जी न आप अभिमानी हैं न उनकी प्रजा को अभिमान होता है, तो उनके चाकर क्यों राक्षसी बोली बोलते हैं?

बोलत हैं अभिमानि नर सदा राक्षसी बानि।
सब बैरन की योनि सो सकल अमङ्गलखानि॥

ऐसा कह कर उसकी निंदा करते हैं। और इसके विरुद्ध जो दूसरे प्रकार की बानी है उसकी प्रशंसा की जाती है।

श्रियहि बढ़ावत आस पुजावत। कीरति दै सब पाप नसावत॥
कामधेनु मंगल की खानी। कहैं धीर मधुरी सो बानी॥

सुमन्त—यह लड़का बाल्मीकि जी का चेला ऋषियों की नाईं बातें करता है।

लव—और चन्द्रकेतु, जो तुम कहते हो कि क्या तुम्हें चाचा के प्रताप की बड़ाई नहीं भाती, तो हम पूछते हैं कि क्या क्षत्रियों के गुन सब एकही ठाँवँ रहते हैं?

चन्द्रकेतु—तुम इक्ष्वाकुवंशी महाराज को नहीं जानते, इससे बहुत बात न बढ़ाओ।

सैनिक जन तुम मारि हटाई। निज बीरता प्रगट दिखराई॥
जेहिरनलही परशुधरहारी। सोहिदिसि अवकहुवचन संभारी॥

लव—जी, परशुधर को हराया, इस कहने से उनकी कौन बड़ाई हुई?

पढ़िवे महँ प्रसिद्ध द्विज बीरा। धरैं बाहुबल क्षत्रिय धीरा॥
भृगुपति बाम्हन गहेसि हथ्यारा। कौन बीर नेहि जीतनहारा॥

चन्द्रकेतु—(बिगड़कर) बस आप बहुत बातें मत कीजिए।

यहकोउ नया नेज अवतारा। परशुधरहिं जिन तुच्छ विचारा॥
अभय किये सब लोकन ओई। तातचरित जानत नहिं सोई॥

लव—अजी रामचन्द्र जी के चरित और उनकी महिमा कौन नहीं जानता. हम क्या कहैं कुछ कहने की बात नहीं।

आप से बडेन के चरित्र न विचारे जात
जग में प्रसिद्ध रहैं कीरति जो पाई है।
मारी सुन्दनारी तऊ जस अधिकारी रहे
ठीकही विदित ताकी लोक में बड़ाई है॥
खर की लड़ाई में निशंक होय तीन पद
आगे जो बढ़ाय वीरपद्धति हढ़ाई है।
करै को बखान तासु जानत जहान भूप
बालि के बधत चतुराई जो दिखाई है॥

चन्द्रकेतु—अरे तूने चाचा की निन्दा करके मर्यादा तोड़ी, अब तू मुहँ सँभाल।

लव—क्या मुझपर भी आप बिगड़े?

सुमंत—इन दोनों के क्रोध की आग भड़क गई।

लाल कोकनद सरिस भए दोहुन के लोचन।
हिलैं केश के बन्ध कोप सन कांपत सब तन॥
नाचि उठीं दोउ भृकुटि क्रोध नहिं सकत सँभारी।
चंचल भृङ्ग समेत कंज की छबि मुख धारी॥

दोनों कुमार-तो चलिए खेत में निकल चलैं।

(सब बाहर जाते हैं)

छठे अङ्क का विष्कम्भक।

[स्थान—आकाश]

(उज्वल विमान पर बैठे विद्याधर और विद्याधरी आते हैं)

विद्याधर—अरे इन सूर्यवंशी कुमारों का चरित देख देख देव असुर सब चकराये हैं। देखो प्यारी, देखो,

चवैं अङ्ग झंकार ने घंट बाजैं। भई बान की वृष्टि कोदंड गाजैं॥
नचैं रुण्ड बोहून के युद्ध घोरा। बढ़ो जात है भूमि पैं हांन सोरा॥

इनहुं कर कल्यान, वढ़वन हित यहि समर महँ।
घन के गरज महान, भइ दुन्दुभिधुनि स्वर्ग महँ॥

तो इन दोनों पर निरन्तर रतन ऐसी जोति वाली कल्पतरु की कलियों की वृष्टि डालो जिसमें सोने के खिले कमल मिले हैं।

विद्याधरी—अरे यह एकायक अकास में बिजुलियें ऐसी क्यों चमक उठीं?

विद्याधर—अरे यह क्या है, अब तो मानो

चमकत भानु सरिस घसो बिसुकर्मा को सान।
जिन माथे के नैन को जनु खोल्यो ईशान॥

(सोच के) अरे, चन्द्रकेतु ने अग्निबान मारा है उसकी लपट फैल रही है। देखो।

ध्वज अरु चँवर जरन जब लागे। लै बिमान सुरगन सब भागे॥
लपटत ज्वाल ध्वजा महँ कैसे। रँगे वस्त्र कुंकुम सन जैसे॥

बड़ा अचरज है, देखो गर्मी चारों ओर फैल रही है, लपटें ऐसे फैली हैं मानो वज्र के खंड चमक उठे। ज्वाला ऐसी बढ़ी मानो चाटने को जीभ ऊपर निकाल रही है। देखने से डर लगता है। तो प्यारी को छिपा के दूर भागूं।

(वैसा ही करता है)

विद्याधरी—नाथ की देह कैसी ठंडी लगी जैसी कोई उज्वल मोती की माला लगती है। मेरी आंखें आनन्द से मुंदी जाती हैं और जलन जाती रही।

विद्याधर—अरे, मैंने क्या किया। तौ भी,

करै नहैं कछु ना करै दुख गाजत नित दूर।
प्रियजन रतन अमोल हैं जगत सजीवनमूर॥

विद्याधरी—यह क्या है जो अकाश में बादल छाए हुए हैं जिनमें बिजुली चारों ओर से लस्ती सी है और जिसकी चमक मतवाले मोर के गले सी हो रही है?

विद्याधर—अहो, यह कुमार लवके चलाए हुए वारुणास्त्र का प्रभाव है। क्या मुसलाधार पानी बरसने से अग्नि का अस्त्र बुझ गया।

विद्याधरी—बहुत अच्छा हुआ।

विद्याधर—हाय हाय, अति सब की बुरी होती है। देखो बड़े प्रबल बगूले के कारण गहरे बादल मथे से जा रहे हैं। उन के अँधेरे में संसार बंधा हुआ जान पड़ता है और विश्व को एक ही बार लीलने के निमित्त कराल काल के मुंह में चक्कर खाता हुआ सा प्रलय के समय योग निद्रा से रोके हुए, चारों ओर से बन्द नारायण के पेट में पड़ा हुआ सा, कांप रहा है। वाह भैया चन्द्रकेतु, वाह, तुमने अच्छे अवसर पर वायव्यअस्त्र चलाया है क्योंकि,

चलत वायु तुरतहि भयो सब मेघन को नास।
नसै सकल भ्रम ज्यों लहत तत्वज्ञानप्रकास॥

विद्याधरी—नाथ, यह कौन है जो दूरही से अपने पट को हिला के लड़ाई को अपनी मीठी बोली से बरजता हुआ दोनों कुमारों के बीच में अपना विमान उतार रहा है।

विद्याधर—यह तो शम्बूक को मार के रघुनाथजी आरहे हैं।
सुनतहि महा पुरुष की बानी। रुके बीर दोउ आदर मानी॥
प्रनमत चन्द्रकेतु ठाढ़ो लव। सुत संग लहैं आज नृप सुख नव॥

(दोनों बाहर जाते हैं)

छठा अङ्क।

[स्थान—वाल्मीकि के आश्रम के पास मैदान]

(रामचन्द्र रथ पर खड़े हैं, लव और चन्द्रकेतु दंडवत करते देख पड़ते हैं)

राम—(पुष्पक से उतर के)

चन्द्रकेतु रविकुल के चन्दा। आउ लागि गर, देहु अनन्दा॥
लहि तव अंगपरस अनुपाला। बुझै आज मोचित की ज्वाला॥

चन्द्रकेतु—मैं प्रणाम करता हूं।

रामचन्द्र—(उठा के स्नेह से गले लगा के) भैया बहुत अच्छे रहे? तुम्हारी दिव्यअस्त्र धरी देह तो कुशल से है?

चन्द्रकेतु—जी सब कुशल है विशेष कर आश्चर्य के काम करने वाले सुन्दर लव के मिलने से। मैं अब विनती करता हूँ कि चाचा जी इस बड़े वीर को मेरे बराबर, वरन मुझ से बढ़ कर कृपा से देखें।

राम—(लव को देख के) बड़े आनन्द की बात है कि भैया के मित्र की आकृति बड़ी सुहावनी है।

अखिल यह रूप जगत रक्षा हित धारा।
वेद बचावन क्षत्रिय धर्म लीन्ह अवतारा॥
सामर्थ्यन को उदय गुनन की मानहुं ढेरी।
भई प्रगट जनु राशि पुण्य के कारन केरी॥

लव-[आपही आप] इस महापुरुष का रूप बड़ा गम्भीर है।

अभय दान अरु भक्ति को मानहुं एक आधार।
चलत धरनि तर धर्म कर यह मानो अवतार॥

बड़ा अचरज है,

बिनस्यो सकल विरोध अरु उपजत हिय अनन्द।
विनय नचावत सीस सम क्रोध तेज करि मन्द॥
यहि लखि परबस सो भयो क्यों जानों कछु नाहिं।

तीरथ कोसो होत है महिमा देखन माहिं॥

राम—यह क्या है जो सब दुख अकस्मात दूर हुये जा रहे हैं और चित्त में किसी निमित्त से स्नेह की धारा सी बही आ रही है? यह तो बात सिद्ध है कि स्नेह सदा निमित्त ही से होता है.

अन्तःकरनहि के मिले मेल होत जग मांहि।
रहं बाहरी बात के प्रीति आसरे नांहि॥
विकसत सदा सरोज लखि उवत दिनेस अकास।
चन्द्रकान्त मनि द्रवत नित लखि चन्द्रमा उजास॥

लव—चन्द्रकेतु ए कौन हैं?

चन्द्रकेतु—भाई, चाचा जी तो हैं।

लव—तुम तो हमको मित्र मानते हो तो हमारे भी हुए पर रामायण की कथा में तो चार जने हैं जिन्हें तुम ऐसा कह कर पुकार सकते हो। यह उन में से कौन हैं?

चन्द्रकेतु—जेठे चाचा जी हैं।

लव—(आनन्द से) अरे क्या श्री रघुनाथ जी हैं? आज का दिन धन्य है जो इनका दर्शन हुआ, (विनय और कौतुक से देख के) चाचाजी, वाल्मीकि का चेला लव आप को प्रणाम करता है।

राम—(स्नेह से) आओ भैया, आओ भैया, यह विनय रहने दो मुझ से अच्छी तरह लिपट जाओ।

परसत पंकजदल सरिस तव सरीर सुकुमार।
चन्दन सम सीतल लगत मोहि सुख देत अपार॥

लव—(आपही आप) यह तो मुझ पर इतना स्नेह रखते हैं और मैंने बे समुझे बूझे इनसे बैर किया और इनसे लड़ने को हथियार उठाया और लड़ बैठा। (प्रकाशक) चाचा जी, लव का लड़कपन जी में न लाइएगा।

राम—भैया तुमने कौन सा अपराध किया ?

चन्द्रकेतु—घोड़े के रखवारों के मुंह से चाचा जी के प्रताप का बखान सुनकर सीखना सिखाई।

राम—अभी यह तो क्षत्रिय का अलंकार है,

नैजुनों बोहि सहन और कर तेज अपार ।
यह सुभाव निर्मोर न कछु क्षत्रिय व्यवहार ॥
निज हने किरन पन्थहि सकल छिपावहि सदी ।
तदपि न पावक जानि, उडन पहि मानि पहानी ॥

चन्द्रकेतु—चाचाजी, इस वीर का ना रन में कोप करना भी अच्छा लगता है परन्तु इनके चलाये जृम्भक हथियार से सेना चारों ओर बेसुध पड़ी है।

राम—(देख के) भैया लव, हथियार हटाओ और तुम भी चन्द्रकेतु, अब लड़ाई का तो काम न रहा सिपाहियों से कह दो आराम करें।

लव—जो चाचा जी की आज्ञा, (ध्यान करता है)

चन्द्रकेतु—जो आज्ञा।

लव—हथियार उठा लिये।

राम—इन हथियारों की तो हम ने सुना है कि मन्त्र से चलाये जाते हैं, और मंत्र ही से खींचे जाते हैं।

कीन्हों तप सत बरस लों ब्रह्मादिक इन हेत ।
तब देखे ए अस्त्र जनु निज तप तेज समेत ॥

इस मन्त्र की बात को भगवान कृशाश्व ने हजार बरस से ऊपर की सेवा के पीछे अपने चेले विश्वामित्रजी को बताया और उन महात्मा ने मुझसे कहा। तुमने कहां से पाया, यह हम जानना चाहते हैं।

लव—अस्त्र आप से आप हम दोनों को आ गए।

राम—(सोच के) होगी, कोई पुराने जन्मों के पुण्यों की महिमा। दोनों क्यों कहते हो।

लव—हम दो भाई साथ ही जन्मे थे।

राम—दूसरा कौन है ?

(परदे के पीछे)

भाण्डायन, भाण्डायन—

तुम का कहहु आज लघु भाई। नृपसेना संग करत लड़ाई
कोउ अधिराज निआहि जनि कहई। कहुहि अब न शस्त्रमद रहई

राम—

को यह नीलम सो छवि धारे। धुनि सुनि पुलकत गात हमारे
सुनि गरजत अति धीर नीलघन। ज्यों पुलकत कदंब बंधि एकछन

लव—यही मेरे बड़े भाई कुश हैं, भरत के आश्रम से लौट आ रहे हैं।

राम—(कौतुक से) भैया, तो उनको भी यहां बुलाओ।

लव—बहुत अच्छा। (चलता है)

(कुश आता है)

कुश—(अचरज आनन्द और धीरज से धनुष उठा कर)

जासु बाहुबल रहत अभय अब लगि सुरराजा।
बाढ़यो जासु प्रताप दुष्ट के आरत काजा॥
होय जो तिनसंग युध कमान तो धन्य हमारी।
दिव्य अस्त्र की ज्योति जासु आरती उतारी॥

(अकड़ के चलता है)

राम—अरे इस क्षत्रिय के लड़के में तो कितनी वीरता जान पड़ती है।

निरखत तृन सम गनत जगत बीरन करनी।
चलत धीर करि गर्व नवावत मानहुं धरनी॥
बाल तऊ यह गिरि समान गरुआई जनावत।

अरे रूप कै गर्व, वीररस कै यह आवत ॥

लव—(आगे बढ़ के) भाई की जय हो !

कुश—भैया, यह क्या लोग कह रहे हैं, लड़ाई हुई ?

लव—कुछ ऐसी ही । आप अकड़ना छोड़ दीजिये और विनय से चलिये ।

कुश—क्यों ?

लव—देखिये यह श्रीरघुनाथजी महाराज बैठे हैं । वह हम लोगों पर बड़ा स्नेह रखते हैं, और आपको देखना चाहते हैं ।

कुश—(सोच के) अरे रामायण कथा के नायक, वेद की रक्षा करने वाले ?

लव—जी हां

कुश—ऐसे महात्मा का दर्शन तो करना ही चाहिए, पर हम उनसे कैसे मिलें यह हम नहीं समझते ।

लव—बड़ा करके मानिये ।

कुश—अरे, यह क्योंकर हो सकता है ।

लव—उर्मिला का लड़का चन्द्रकेतु बड़ा सुजन है, वह हम को मित्र कर के मानता है, उसी नाते से वह राजा भी हमारे चाचा होते हैं ।

कुश—ऐसे क्षत्रियों से हाथ जोड़कर मिलना उचित भी तो है

लव—देखिये यही महापुरुष हैं इनके चरित कैसे लोक के ऊपर हुए हैं और इनका रूप कैसा गम्भीर और अनुभाव कैसा उत्तम है ।

कुश—(देख के) अहो पवित्र प्रभाव यह रूप नयनसुखन्द ।
रामायन रचि मुनि दियो वानिहि परम अनन्द ॥

(आगे बढ़ कर) चाचा जो, वाल्मीकि का चेला कुश प्रणाम करता है ।

राम—आओ भैया ।

अमिय भरे घन के सरिस रुचिर देह लव देखि ।
मम लोचन को नेह अरु उपजै चाह विसेखि ॥

(गले लगाकर आपही आप) भला क्या यह मेराही लड़का है।

अङ्ग अङ्ग में नेह देह के रस सों बाढ़ा ।
मनहुँ चेतनधातु निसरि आयो जनु गाढ़ा ॥
हृदय अंतःकरन माहिं आनन्द तरंगा ।
छावै अमोघ की धार मनहुँ सींचत सब अंगा ॥

लव—बाबा जी, सूरज की किरनें माथे पर पड़ रही हैं, आइये इस साल के पेड़ की छाँह में छिन भर बैठकर विश्राम कीजिये ।

राम—बहुत अच्छा भैया ।

(सब यथाचार बैठते हैं)

राम—(आपही आप)

करत विनय यद्यपि तऊ उठन बैठने माहिं ।
राजकुमारन के सरिस इनके भाव लखाहिं ॥
सुंदरता अँग अँग माहिं अति सहज दिखावत ।
कुसुमन पै दोउ वीर सबन कर चित्त लुभावत ॥
दरसत तन मनि सरिस लहे अति सुन्दर जोती ।
चुवत मनहुँ मकरन्द कँज की सी द्युति होती ॥

इन लड़कों में बहुत ही बातें रघुकुल के लड़कों की देखता हूँ,
नील परेवकंठ के रङ्ग । वृष से कंध सुघड़ सब अङ्ग ॥
मुदित सिंहसम चितवत धीरा । धुनि मृदङ्ग के सरिस गंभीरा ॥
(ध्यान से देख के) अरे कुछ हमारा ही रूप नहीं है,

जनकसुता के चिन्ह सब इन दोउ बालकन माहिं ।
ऐसे कछुक विचार तें इक इक प्रगट लखाहिं ॥
बैनन के गोचर भयो यहै होत अनुमान ।
प्रानप्रिया मुखससि मनहुँ नव जलजात समान ॥

अलिय भयो धन के सरिस रुचिर देह नव देखि ।
भर लोचन को नेह अस उपजै चाह बिसेखि ॥

(गले लगाकर आपही आप) भला क्या यह मेराही लड़का है ?

अङ्ग अङ्ग में नेह देह के रस सों बाढ़ा ।
तनसों चेतनधातु निसरि आयो जनु ठाढ़ा ॥
इरत अंतःकरन याहि आनन्द तरंगा ।
डारि अमीय की धार मनहुं सींचत सब अंगा ॥

लव—बाबा जी, सूरज की किरनें माथे पर पड़ रहीं हैं, आइये इस साल के पेड़ की छांह में छिन भर बैठकर विश्राम कीजिये ।

राम—बहुत अच्छा भैया ।

(सब यथाकार बैठते हैं)

राम—(आपही आप)

करत विनय यद्यपि तऊ उठन बैठने माहिं ।
राजकुमारन के सरिस इनके भाव लखाहिं ॥
सुंदरता अँग अँग मांहि अति सहज दिखावत ।
छपिसन प दोउ बीर सबन कर चित्त लुभावत ॥
दरसत तन मनि सरिस लहे अति सुन्दर जोती ।
चुवत मनहुं मकरन्द कँज को सी द्युति होती ॥

इन लड़कों में बहुत ही बातें रघुकुल के लड़कों की देखता हूं.

नील परेवकंठ के रङ्गा । वृष से कंध सुघड़ सब अङ्गा ॥
मुदित सिंहसम चितवत धीरा । धुनि मृदङ्ग के सरिस गंभीरा ॥

(ध्यान से देख के) अरे कुछ हमारा ही रूप नहीं है.

जनकसुता के चिन्ह सब इन दोउ लरिकन माहिं ।
देखें कछुक बिचार तें इक इक प्रगट लखाहिं ॥
नैनन के गोचर भयो यहै होत अनुमान ।
प्रानप्रिया मुखससि मनहुं नव जलजात समान ॥

दसनपाँति सोइ मोतिन समाना । सोइ ओंठ सुंदर सोइ लाला ॥
लोचन यद्यपि लाल अरु कारे । तऊ शोभित हग जानकि प्यारे ॥
यह तो वही वाल्मीकि का तपोवन है जहाँ रानी छोड़ी गई थीं, इन लड़कों का रूप भी वही है, और जो दिव्यास्त्र अपने आप प्रकाश हुए हैं जो उनका भी हमको ज्ञान है कि हमने चित्र दर्शन के समय अस्त्रों से कहा था। इतिहास बिना किये नहीं मिलते यह भी हमने सुना है। हमारे चित्त का दुख और घबड़ाहट यह सब देख के हमको भ्रम में डाल रहे हैं। हम ने तो रानी के पेट से जान लिया था कि दुहुँ गर्भ है। (आँखों में आंसू भर के रोके) तो इनसे किसी उपाय से पूछूं।

लव—दादा जी यह क्या है?

अचानक यह चन्द लख कमल आँसु की धार।
पुण्डरीक के तल भयो जिमि जहँ परत तुसार॥

कुश—भैया,

बिन सीतादेवी सबै दुख रघुपतिहि अपार।
प्रिया नसे संसार सब बन समान ह्वै जात॥
कहँ सनेह यह, अवधि बिन यह वियोग कहँ तात।
रामायण नाहीं पढ्यो तुम पूछहु अस बात?

राम—(आपही आप) अरे इस लड़के के पूछने में कैसी मरम की बात निकली। हाय पापी चित्त, यह तू क्या देखा अकस्मात् स्नेह से उबल पड़ा और ऐसा घबड़ा गया कि लड़के भी हम पर तरस खाने लगे। अच्छा तो और बात छेड़ें। (प्रकाश) लड़को, हमने सुना है कि वाल्मीकिजी ने रामायण सूर्यवंश की बड़ाई बखान में रचा है, हमें भी उसके सुनने की इच्छा है, कुछ कहो तो।

कुश—हमने तो पूरा ग्रन्थ कई बार पढ़ा है। बालकाण्ड के अन्त में यह याद है।

राम—कहो तो भैया,

कुश-रघुनन्दन कहँ जनककुमारी। रही सुभावहि सन अतिप्यारी॥
पुनि सिय सील सनेह जनाई। पतिमन कीन्ह प्रीति अधिकाई॥
तैसेहि प्रिय निज प्रान समाना। रामहि जनक सुता निज जाना॥
तिन दोउन कर प्रेम घनेरा। जान्यो एक हृदय तिन केरा॥

राम—हाय, इन बातों के सुनने से तो छाती फटती है। हाय प्रिया ऐसी ही थी। हाय, संसार की बातें कैसा जी जलाती हैं न इनका कुछ ठिकाना है, न इन में कोई रस है। अब उलट गई और अन्त इनका कैसा दुखदाई हुआ।

वह अनन्द कहँ कहव सुनव सब छाँड़ि दुराऊ।
कहँ वह भोग एक इक को सुख देन उपाऊ॥
कहँ वह हिय को मेल सदा सुख औ दुख माहीं।
अजहुं पापी प्रान रहैं त्यागैं तन नाहीं॥

हाय हाय, प्रानप्रिया के कोटि गुन प्रगट जनावत जोय।
सुधि आवत सोइ दिनन की यदपि चेति दुख होय॥

कुश—और यह मन्दाकिनी के किनारे चित्रकूट बनविहार में सीता जी से रघुनाथ जी ने कहा था।

धरी तेरेही काज यह शिलापट्ट विधि लाय।
केसर जाके चारि दिसि द्रुम फूल बरसाय॥

राम—(लाज स्नेह और करुणा से) ये लड़के बड़े भोले हैं, विशेष करके जङ्गल में रहने से। हाय प्रिया, उस समय हम लोग जो बात चीत करते थे उसकी सुननेवाली और देखनेवाली वस्तुओं की सुध है? हाय,

निसरत जब मग चलत पसीना। तब कपोल दोऊ कुंकुमहीना॥
मंदाकिनि सन चलत बयारी। लटन हिलावत तिन पर डारी॥
बिन भूषन सुन्दर दोऊ काना। सुमिरौं मुख तव चन्द्रसमाना॥

(घबड़ाए हुए, ठहर कर करुणा से) अरे इस समय तो

करत निरन्तर ध्यान खड़ो आगे जनु लागै।
विरहहु में सुख देन बानि प्रियजन नाहि त्यागै॥
छूटतही पुनि ध्यान होय जग ज्यों बन सूना।
परे घास की आगि जात हियरो जनु भूना॥

(परदे के पीछे)

दशरथनृप की रानि अरुन्धति सँग वसिष्ठ मुनि।
बालमीकि औ जनक लड़त दोउ लरिकन को सुनि॥
आश्रम से अति दूर वेगही चरन उठावत।
थके बुढ़ापे हेत मन्द मन्दहि सब आवत॥

राम—अरे, अरुन्धती, वसिष्ठ, अम्मा, और जनकजी से
वे मिलें? (करुणा से देख के) हाय, जनकजी भी यहीं
ते हैं, यह तो मुझे अभागी को वज्र सा लगता है।

सम्बन्ध लहि मनभावतो अति मुदित भरे उछाह में।
दोउ तात कर लखि मिलन लरिकन के सुयोग विवाह में॥
सो आज पितु के सबहिं देखत भये यह अनरथ महा।
नहिं फटत हिय, तो, राम सों जग माहि ह्वै न सकै कहा॥

(परदे के पीछे) हाय, हाय.

लखि यहि विधि औचक रघुपतिमुख।
तेजहि तन पहिचानि पाइ दुख॥
मूर्छित जनकहि प्रथम जगाई।
बेसुध गिरत मातु घबराई॥

राम—हाय जनक जी, हाय माता.

दोउ कुल के कल्यानकर रह्यो जु एक अधार।
तेहि नास्यो मो निठुर हित व्यर्थहि सोच तुम्हार॥

तो अब मिलूं। (उठते हैं)

कुश और लव—इधर इधर चाचा जी।

(करुणा से घूम कर सब बाहर जाते हैं)

सातवां अङ्क।

[स्थान—रंगभूमि]

(लक्ष्मणजी आते हैं)

लक्ष्मण—महात्मा वाल्मीकिजी ने आज ब्राह्मण क्षत्रिय आदि नगरनिवासी समेत हम लोगों को बुलाया है, और देव असुर किन्नर जितना संसार है सब को अपनी महिमा से इकट्ठा किया है। हमको भाई ने आज्ञा दी है कि 'वाल्मीकि जी ने अपना रचा नाटक अप्सराओं से खेलवाने का प्रबन्ध किया है; उसी को देखने के लिये हम लोगों को भी बुलाया है: सो गंगाजी के किनारे रंगभूमि रचवाकर सब को बैठा दो'; हमने भी सुर नर मुनि सब को बैठा दिया। अब तो भाई

नृपआश्रम यद्यपि रहत धरे कछु मुनिनेम।
आपहि आवत हैं इतै वाल्मीकि के प्रेम॥

(श्रीरामचन्द्र आते हैं)

राम—भैया लक्ष्मण, रङ्ग देखने वाले सब बैठ गये।

लक्ष्मण—जी हां।

राम—कुश और लव दोनों लड़कों को भी बराबर आसन देने चाहिये।

लक्ष्मण—उन पर आपका स्नेह मैं पहिले से जानता था, इसी से मैंने जैसा आपने कहा वैसाही किया है, आप भी सिंहासन पर बैठ जाइये।

राम—(बैठते हैं)।

(सब बैठ जाते हैं)

राम—अच्छा, लग्गा लगाओ।

(सूत्रधार आता है)

सूत्रधार—यथार्थ वचन बोलनेवाले महात्मा वाल्मीकि

री चराचर सब को आज्ञा देते हैं कि हमने अपने ध्यान से सब जान के करुणा और अद्भुत रस का एक नाटक रचा है, सो शिष्य के गौरव से ध्यान से सुनो।

राम—बहुत ठीक कहा। ऋषि लोग सब कुछ जानते हैं। उन महात्माओं के ज्ञान सब अद्भुत से होते हैं, कभी चूकते नहीं, इस से कोई सन्देह न करें।

(परदे के पीछे)

हा आर्यपुत्र, हा कुमार लछमन जी, मुझ अभागिनी के लड़का होने चाहता है, और मैं अकेली बिना आसरे के जङ्गल में पड़ी हूं मुझे मानो बाघ भेड़िये खाने को दौड़ते हैं, सो मैं गङ्गा जी में कूदी पड़ती हूँ।

लक्ष्मण-(आपही आप) अरे यह तो कुछ औरही बात निकली।

सूत्रधार—छाँड्यो बन जेहि भूप लै इ अभिशुद्ध नहाति।
गङ्गा महँ डारत निजहिं प्रसव समय अब जानि॥

राम—अरे रानी ठहरो।

लक्ष्मण—दादा यह तो नाटक है नाटक।

राम—हाय रानी, दंडक बनवास की प्यारी सखी, यह तुम्हें राम के कारन दुख भोगना पड़ता है।

लक्ष्मण—दादा नाटक का अर्थ तो देखिये।

राम—होने दो, हम तो पत्थर की छाती लिए देखतेही हैं!

(गोद में एक एक लड़का लिये पृथिवी और गङ्गा सीता को सम्हाले हुए आती हैं)

राम—भैया लछमन अरे, मुझे सँभालो, मुझे सब सचही सा जान पड़ता है।

गङ्गा—बड़भागिनि धरु धीर, जाए जल तैं पुत्र द्वै।
धरे तेज बल बीर, जिन सन चलिहै भानुकुल।

सीता-(सांस लेके) अरे मेरे दो लड़के हुये। हा आर्यपुत्र

(बेसुध हो जाती है)

लक्ष्मण—(पैरों पर गिर करके) दादा, दादा बड़ी भाग हम लोगों की है कि रघुवंश की प्रतिष्ठा हो गई। (देख के) हाय क्या भाई बेसुध हो रहे हैं और आंखों से आंसू की धारा चल रही है। (पंखा झलता है)

पृथिवी—बेटी धीरज धरो, होश में आओ।

सीता-(सांस लेके) भगवती तुम कौन हो और यह कौन है?

पृथिवी—यह तुम्हारी ससुराल की कुलदेवता गङ्गाजी हैं।

सीता—भगवती मैं तुम्हारे पॉव पड़ती हूँ।

गङ्गा—बेटी जैसा तुमसी प्रतिव्रता के लिये चाहिये वैसा ही तुम्हारा कल्याण हो।

लक्ष्मण—हम लोगों पर बड़ी कृपा हुई।

गङ्गा—और यह तुम्हारी मा पृथिवी हैं।

सीता-हाय अम्मा तुम्हें मुझे इसी दशा में देखना बदा था।

पृथिवी—आओ बेटी (सीता को गले लगाकर बेसुध हो जाती है)

लक्ष्मण—बड़े आनन्द की बात है कि भाभी को गङ्गा और पृथिवी दोनों मानती हैं।

राम—(देखके) कैसी करुणा की बात है, पृथिवी भी दुख पाती है। लड़कों का स्नेह इतना बढ़ गया है। और होनाही चाहिये। संसार का बन्धन किसी के तोड़े नहीं टूटता। जितने समझदार जीव हैं सब इसी मोह की गांठ से बँधे हैं।

गंगा—बेटी सीता देवी, वसुन्धरा, जागो धीरज धरो।

पृथिवी—देवी सीता की मां होकर कैसे धीरज धरूँ? पहिले रह्यो वास राक्षस घर। अब यह दुसह त्याग भा दूसर

गंगा—

असको जीव सकल संसारा। जो विधिलेख मिटावन हारा॥

पृथिवी—गंगाजी आपने ठीक कहा। पर रामचन्द्र को यह उचित था?

बालपने को संग कै सील नेह संतान।
अग्नि सोग अरु जनक कर राखत मान प्रमान॥

सीता—अरे आर्यपुत्र की सुध क्यों दिलाती हो?

पृथिवी—अरे कौन है तेरा आर्यपुत्र?

सीता—(लाज से आँसू भर के) नहीं अम्मा, कोई नहीं?

राम—पृथिवी माता हम इसी जोग हैं।

गंगा—पृथिवी देवी, तुम तो संसार की देह हो, तुमको दमाद पर इतनी रिस न चाहिये!

फैलो जगमहँ अजस भई जो शुद्धि कि रीती।
लंका में अतिदूर होइ केहि तासु प्रतीती?
करै विमल जस रखि राजी जगके जन सारे।
रघुकुल को यह धर्म करैं क्या राम बेचारे?

लक्ष्मण—देखिये देवता प्राणियों पर कितनी दया करते हैं, विशेष कर गंगा जी।

राम—माता तुमतो भगीरथ के वंश पर सदा प्रसन्न रही।

पृथिवी—देवी मैं आप लोगों पर सदा प्रसन्न रहती हूं, मैंने जो कुछ कहा वह विपद जब सही नहीं गई तब मोह वस बक डाला। क्या मैं नहीं जानती कि सीता पर भैया रामचन्द्र जी का स्नेह कितना है?

तजी सीय जब दैव बस हियो भनहुं विलगान।
प्रजा पुराय औ धीर से अबलों धारत प्रान॥

राम—मातापिता लड़कों पर दया न करैं तो कैसे काम चलै।

सीता—(रोती हुई हाथ जोड़ के) अम्मा मुझे तू अपने में लेले।

राम—देखैं, अब क्या कहती हैं।

गंगा—यह क्या कहती हो, तुम हजार बरस तक अभी संसार में रहो।

पृथिवी—बेटी, लड़कों को भी तो पालना ही है।

सीता—मैं अनाथ हूँ मेरे किये क्या होगा ?

राम—हाय मेरी छाती वज्र की है।

गंगा—तुम ऐसा क्यों कहती हो, तुमसी सनाथ कौन है ?

सीता—मैं अभागिनी हूँ कैसे सनाथ हो सकती हूं।

दोनों देवियाँ—धरि कै क्यों मानति निजहिं अमंगलसमुदाय।
हरहिंहु वढ़त पवित्रता जो तेरो संग पाय॥

लक्ष्मण—दादा सुनो।

राम—हम क्या सुनैं, संसार सुनै।

(परदे के पीछे रौला होता है)

राम—कोई बात बड़े अचरज की है।

सीता—अरे आकाश क्यों चमक उठा है ?

दोनों देवियां—जाना।

कौशिक लह्यो कृशाश्व सन, कौशिक सन जेहि राम।
जृम्भक सहित हथ्यार सोइ, प्रगट होत इहिं ठाम॥

(परदे के पीछे)

वंदै सीतादेवि तोहि हम तव पुत्रनहाथ।
चित्र लखत आज्ञा दई हम कों श्री रघुनाथ॥

सीता—बड़ी भाग है कि अस्त्र देवता चमक रहे हैं।

लक्ष्मण—आपने कहा न था कि यह तुम्हारी संतान को लैंगे।

राम—लहर शोक आनंद की मिलि अचरज के संग।
चित घवरावन मथन सो जनु मानहुं अंग अंग॥

दोनों देवियां—बेटी अब तुम्हारे दोनों लड़के भैया रामचन्द्र के बराबर हो गये।

सीता—भगवती, इनका संस्कार करनेवाला तक तो कोई नहीं है।

राम—मुनि वशिष्ठ है तासु गुरु सो रघुवंश बढ़ाय।
संस्कार हित सुतन के सिय न लहत गुरु हाय॥

गंगा—बेटी, तुम इसकी चिन्ता न करो दोनों लड़के दूध बढ़ाने के पीछे महात्मा वाल्मीकि जी को सौंप दिये जायेंगे, वह ही इनका संस्कार करेंगे।

शतानंद वसिष्ठ गुरु जैसे। वाल्मीकि दोउ कुल के तैसे॥

राम—गंगा जी ने अच्छा सोचा।

लक्ष्मण—दादा, मैं आप से सच कहता हूं यह दोनों कुश लव वही लड़के हैं।

ये दोउ बारह बरस के जृम्भक इन के हाथ।
संसकार इन कर कियो वाल्मीकि मुनिनाथ॥

राम—भैया, मुझे कुछ नहीं समझ पड़ता, इतना घबड़ा रहा हूं।

पृथिवी—बेटी आओ पाताल को पवित्र करो।

राम—हाय प्रिया, तू पाताल चली गई।

सीता—मां ऐसा कर कि मैं तुझ में समा जाऊं, मुझ से संसार के दुःख सहे नहीं जाते।

राम—देखें क्या उत्तर देती है।

पृथिवी—बेटी, बच्चों के दूध बढ़ाने तक ऐसी ही रहो पीछे जो चाहना सो करना।

(गंगा, पृथिवी, और सीता बाहर जाती हैं)

राम—हाय, क्या जानकी धरती में समा गई ? हाय दंडक बनवास की प्यारी सखी ! हाय पतिव्रत की देवी ! तू परलोक चली गई ? (बेसुध हो जाते हैं)

लक्ष्मण—महात्मा वाल्मीकि जी दौड़ो दौड़ो क्या आपके नाटक का यही अर्थ है ? (परदे के पीछे)

हटाओ बाजा, अजी चराचर जीव, वाल्मीकि जी का रचा पवित्र अचरज देखो।

लक्ष्मण—(देखकर) बड़ा अचरज है।

नभ महँ छाय देवध्वनि उमड़त गङ्गतरंग।
भाखी अवत लखि परत गंगा पृथिवी संग?
(फिर परदे के पीछे)
सौंपत तो निरलाज, यहि भागीरथि बसुमती।
सौंपत तुम कहँ आज, अरुन्धती, जगपूज्य तुम॥

लक्ष्मण–बड़ा अचरज है। दादा देखिये देखिये, हाय, हाय, दादा अब भी नहीं जागते।

(अरुन्धती और सीता आती हैं)

अरु—बहू जानकी, धीरे धरु, तजु यहि छन सब लाज।
निज प्रिय कर सों पुत्र कहँ परसि जियावहु आज॥

सीता—(घबड़ाती हुई छू कर) आर्यपुत्र, जागिये।

राम—(आंखें खोल कर आनन्द से) अरे यह क्या है? क्या भगवती अरुन्धती ऋष्यशृंग और शान्ता समेत सब लोग प्रसन्न हो रहे हैं।

अरुन्धती–यह देखो भगीरथ के कुल की देवता गङ्गाजी हैं।

गङ्गा–महाराज रामचन्द्र, तुमने चित्र देखने के समय मुझ से कहा था कि "हे माता तुम अपनी बहू का कल्यान करना" सो मैं आज उरिन हो गई।

अरुन्धती—यह तुम्हारी सासु वसुमती हैं।

पृथिवी–भैया, तुमने बेटी को त्यागते समय कहा था कि भगवती वसुन्धरा, तुम अपनी बेटी जानकी को देखे रहना, तुम को सौंपता हूँ, सो तुम मेरे स्वामी और लड़के दोनों हो, मैंने तुम्हारा कहना कर दिया।

राम–मैंने तो बड़ा अपराध किया था, तो भी आप लोगों ने दया की। मैं आप लोगों को प्रणाम करता हूँ।

अरुन्धती—सुनो जी नगर के लोगो! भगवती गङ्गाजी और पृथिवी ने इतनी बड़ाई करके सीता हम को सौंप दी,

इसके पहिले अग्निदेवता ने इनकी पवित्रता जांची थी। देवताओं ने गुन गाये, यज्ञभूमि में इनका जन्म हुआ सो सूर्यवंश की वह सीता फिर घर ली जाय. इसपर आप लोगों का क्या विचार है ?

लक्ष्मण—अरुन्धती जी ने नगर के लोगों को अच्छी झिड़की दी। अब तो सब संसार भाभी के हाथ जोड़ रहा है, और देवता और सप्तऋषि फूल बरसा रहे हैं।

अरु—भैया रामचन्द्र—

धर्मचारिणी धर्म से करिय धर्म अनुरूप।
यह सीता की मूर्त्ति का सत्य पवित्र स्वरूप॥

सीता—(आपही आप) देखें आर्यपुत्र सीता का दुख मेटते हैं कि नहीं।

राम—जो भगवती की आज्ञा।

लक्ष्मण—हमारे बड़े भाग हैं।

सीता—(आप ही आप) मैं तो जी गई।

लक्ष्मण-भाभी, निलज्ज लक्ष्मण तुम्हारे प्रणाम करता है।

सीता—भैया, तुम ऐसेही लाख बरस जियो।

अरु—महात्मा वाल्मीकिजी, सीता के पेट से जो रामचन्द्र जी के लड़के कुश और लव हैं उनको ले आइये।

राम और लक्ष्मण—क्या हुआ !

सीता—(आंखों में आंसूभर के घबड़ाई सी) कहां हैं मेरे लड़के ? (वाल्मीकि, कुश और लव आते हैं)

वाल्मीकि—भैया लवकुश, यह रघुनाथ जी तुम्हारे पिता हैं, लक्ष्मण जी तुम्हारे छोटे चाचा. सीतादेवी तुम्हारी माँ हैं, और यह राजर्षि जनकजी तुम्हारे नाना हैं।

सीता—(हर्ष से देख के) अरे ! पिता भी यहीं हैं !

कुश और लव—पिता ! अम्मा ! नाना !

राम और लछमण—(हर्ष से गले लगा के) भैया बड़ी भाग से मिले हो।

सीता—आओ बेटा कुश आओ भैया लव, आज तुम्हारी माँ का नया जन्म हुआ है। आओ मेरी छाती से लग जाओ।

लव और कुश-(मिल के) हम लोग धन्य हैं।

सीता—(वाल्मीकि से) महात्मा जी मैं तुम्हारे पाँव पड़ती हूँ।

वाल्मीकि—बेटी, तुम ऐसी ही सदा प्रसन्न रहो।

सीता-अरे, पिता भी हैं कुलगुरु सब सास, शांताबीबी, लछमन जी समेत आर्यपुत्र के चरण और लव, कुश सब इकट्ठे देख पड़ते हैं, सो मैं आनन्द से फूली नहीं समाती।

(परदे के पीछे रौला होता है)

वाल्मीकि—(उठ कर देख के) लवनासुर को मार के शत्रुघ्न जी आ गये।

लछमण—जब कल्याण होते हैं तो एक साथ ही होते हैं।

राम—हम तो देखते भी हैं तो भी हमें प्रतीत नहीं होती और जब मंगल होता है तो ऐसा ही जान पड़ता है।

वाल्मीकि—भैया रामचन्द्र, कहिये अब आप क्या चाहते हैं सो हम करें।

राम—इस से अधिक अब क्या मनोरथ होगा। तौ भी,

चित्त हरै सब केर कथा यह लोकके हेत सुमंगलखानी।
पापन सों जगलोगनके मन शुद्ध करै जस गंग को पानी॥
नाटक रम्य खेलाइ निरंतर देखैं सुनैं नित पंडित ज्ञानी।
जानत शब्द को वेद अथाह जो सो कविनाथ मुनीस की बानी॥

(सब बहार जाते हैं)

इति भूपउपनाम श्रीअवधवासीसीतारामकृत।
उत्तररामचरितभाषा नाटक समाप्त हुआ॥

पहिली आवृत्ति की भूमिका।

अवधपुरी सुखमाअवधि तामधि स्वाँहारि।
जगपावनि सरजू जहाँ बहत सुहावन बारि॥
तहाँ रह्यो कायस्थ एक श्री छिवलै उदार।
श्रीरघुपतिपदकमल महँ ताकौ भक्ति अपार॥
सियरघुबरयुगचरनरत तासुत सीताराम।
जन्मनाम कवितासुगम लहे भूप उपनाम॥
सुखद बेदशरनन्दशशि संवत फागुन मास।
महावीर सियवर चरित भाषा कीन्ह प्रकास॥
भाषा उत्तरचरित को रचि निज मति अनुसार।
धरयो प्रभुपदकमल अब करत लोक उपहार॥
बरन्यो श्रीभवभूतिकवि यहि महँ सियकर त्याग।
दुसह बिरह दारुन दसा धीरज अरु अनुराग॥
जाय दूर सुत सोय जिमि बाल्मीकि के धाम।
मारन के हित शूद्रमुनि गे दंडक जिमि राम॥
पुनि जय रक्षक सेन संग अश्वमेध मख काज।
बिचरत हैत स्वतंत्र जग तस्यों तुरंग रघुराज॥
क्षत्रियकुल अपमान तेहि गनि सीतासुत वीर।
पकरि तुरग बालन सकल कीन्हीं सेन अधीर॥
सकल अनूपम चरित सोइ सियपतिसुजस विचारि।
पढ़िहैं प्रेमी राम के मेरे दोष बिसारि॥

कानपुर
वैशाख शुक्ल ५
सम्बत १९५४

श्री अवधवासीसीताराम